संरक्षक :

परम पूज्य श्री सत्गुरू

卐

-: सम्पादक मण्डल :-

डॉ. (श्रीमती) के. के. पंधेर

मनोहर तेजवानी

जितेन्द्र दीवान

भूमिका

हमारे चारों ओर जो कुछ भी दृष्टिगोचर है, वह परिवर्तनशील है। समय के साथ बदलते हुये दृष्टिकोण एवं संबंध तथा बदलती हुई मान्यतायें हम नित्य देखते हैं। हमारा मानव-तन भी शनैः शनैः शिशु से युवा व युवा से वृद्ध-रूप धारण कर लेता है और बाह्य जगत के आकर्षण में ही हम स्थायी शांति, सच्चा आनन्द और परम संतुष्टि ढूंढ़ते रहते हैं। परन्तु क्या यह संभव है? नहीं। जो वस्तु जहां है ही नहीं, वहां से प्राप्त कैसे हो सकती है। इसके लिये तो हमें सांसारिक प्रपंचों का निर्वाह करते हुये आत्मिक-उन्नति के अंतर्मार्ग पर चलना होगा। उस सत् की ओर झुकना होगा जो अनादि व अनन्त है।

वैसे तो हम सदैव कुछ न कुछ करते ही रहते हैं। कभी उत्सुकतावश, कभी अपनी इच्छाओं व कामनाओं की पूर्ति के लिये, कभी कर्तव्य-वश तथा कभी ममता, दया व करूणा से प्रेरित होकर। परन्तु कितने आश्चर्य की बात है कि हम स्वयं पर कभी दया नहीं करते। अपने अमूल्य मानव जीवन को व्यर्थ जाते देखकर तथा प्रति पल मृत्यु के अधिकाधिक समीप पहुंचकर भी हमारे मन में करूणा उत्पन्न नहीं होती। काम, क्रोध, लोभ, मोह एवं अहं द्वारा दिन-रात लुटते रहने पर भी हमें इनसे सावधान रहने की सुधि नहीं आती।

परम सौभाग्य वश आज जब हमें सचेत करने वाले, हमें हमारे जन्म के हेतु एवं परिणाम का बोध करा देने वाले तथा अंतर्मुखी मार्ग पर हमारा मार्गदर्शन करने वाले सतगुरू की शरण प्राप्त है तो यह हमारा प्रथम कर्तव्य हो जाता है कि हम उनके आदेशों का पालन कर अपने दिव्य जीवन को सार्थक बनाने की राह पर निर्भयतापूर्वक चल पड़ें। सत्गुरू का संरक्षण एवं आश्वासन ही इस पथ पर हमारा संबल है। उनकी कृपा के बिना कुछ भी संभव नहीं है।

इन्हीं सत्गुरू श्री वासुदेव रामेश्वर तिवारी जी के ८८वें जन्मोत्सव के पावन अवसर पर प्रकाशित "उद्बोधन" का सातवां अंक आपके हाथों में है।

उनके चरणों में हृदय की समस्त शुभ-कामनाएं अर्पित कर हम उनके स्वस्थ एवं दीर्घ जीवन के लिये प्रार्थना करते हैं।

सम्पूर्ण गुरू परिवार को गुरू-पर्व की बहुत बहुत बधाई हो।

रायपुर 23.7.95

दो शब्द

मानव जन्म से बढ़कर और कोई जन्म नहीं होता। पता नहीं, कितने जन्मों के बाद मनुष्य देह मिलती है। लेकिन होता क्या है, किये गये अथवा किये जा रहे कर्मों के कारण उसे व्यर्थ ही गवां दिया जाता है। सुबह से शाम तक तो क्या, पूरा जीवन मैं, मेरा और तैं, तेरा में व्यतीत हो जाता है लेकिन कोई समझ नहीं पता है।

मैं करता हूं। तुम करते हो। मैं नहीं होता, तो क्या होता। आज तुम मेरे बल पर हो वरना, पता नहीं तुम्हारा क्या हाल होता। बस, यही मनुष्य का स्वभाव बन गया है। अपनी जीविका के बारे में कभी नहीं सोचता। कोई विरला ही इस ओर अग्रसर होता है।

आपने कभी सुना है, पेड़ ने कहा हो – मैं फल देता हूं, मैं राहगीरों को छाया देता हूं। कभी सुना है – नदी, तालाब, कुआं और मेघ ने कहा हों कि मैं पानी देता हूं। गाय ने कहा हो – मैं दूध देती हूं। कभी नहीं। सब प्रकृति के अनुरूप होता चला जाता है लेकिन ये मनुष्य "मैं" में ही डूबता चला जाता है तथा अपना जीवन समाप्त कर देता है। कभी ये नहीं सोचता कि उसके द्वारा किया जा रहा प्रत्येक कर्म किसी शक्ति के द्वारा ही रहा है। कहते हैं – "क्रिया से संज्ञा का बोध होता है"। इसलिए प्रत्येक व्यक्ति की क्रिया किस ओर इंगित करती है यह समझना जरूरी है। यदि आप अपनी प्रत्येक क्रिया की ओर ध्यान दें तो सत्य सामने आ जायेगा, पता चल आयेगा कि इस देह का संचालन कैसे हो रहा है और कौन कर रहा है। इसके लिये अभ्यास की आवश्यकता है और आवश्यकता है एक ऐसे सशक्त सहारे की जो मार्गदर्शन कर सके तथा बोध करा सके उसकी क्रिया को, जो कुछ नहीं करते हुए भी सब कुछ करता है। ऐसे समर्थ सत्गुरू की, ऐसे अनुभवी महापुरुष की इन्सान को जरूरत है।

पत्रिका के प्रकाशन में रायपुर गुरू परिवार के सदस्यों, विशेष रूप से श्री योगेश शर्मा एवं श्री बी. एस. वैष्णव का सहयोग सराहनीय रहा है।

इस पत्रिका में प्रकाशित प्रवचन, केसेट्स सुनकर शब्दांकित किये गये हैं। सम्भवत: प्रस्तुत करने में अनेकों त्रुटियां हुई हों जिसके लिये हम परमपूज्य गुरूजी एवं समस्त पाठक-गण से विनम्रतापूर्वक क्षमा-याचना करते हैं।

※ विषयानुक्रमणिका ※

क्रमांक	विषय	पृष्ठ संख्या
१–	वन्दना	
२–	प्रवचन	
	(अ) मनुष्य में छिपी हुई एक रहस्य की बात।	१
	(ब) साधक कब स्थितिप्रज्ञ होता।	८
	(स) धर्म क्या है ?	१३
	(द) अहं एवं संशय।	१६
	(इ) ईश्वर क्रिया है।	१८
३–	प्रेरक उद्बोधन	२१
४–	सत्गुरू महिमा अनत है (शिष्यानुभव)	२५
५–	गुरू पर्व, 94–आय–व्यय पत्रक	४७
६–	उद्बोधन पत्रिका–आय व्यय पत्रक 94	४८

परम पूज्य श्री सद्‌गुरूजी

“श्री वासुदेव रामेश्वरजी तिवारी”

वन्दना

गुरूर्ब्रह्मा गुरूर्विष्णु, गुरूर्देवो महेश्वरः ।
गुरूरेव परब्रह्म, तस्मै श्री गुरवे नमः ॥

अज्ञान तिमिरांधस्य, ज्ञानांजन शलाकया ।
चक्षुरून्मीलितम् येन, तस्मै श्री गुरवे नमः ॥

अखंड मंडलाकारं व्याप्तं येन चराचरम् ।
तत्पदम् दर्शितम् येन तस्मै श्री गुरवे नमः ॥

ब्रह्मानंदम् परम सुखदम् केवलम् ज्ञान मूर्तिम् ।
द्वंद्वातीतम् गगनसदृशम् तत्वमस्यादिलक्ष्यम् ॥

एकम् नित्यम् विमलमचलम् सर्वधी साक्षिभूतम् ।
भावातीतं त्रिगुण रहितं सद्गुरूम् तम् नमामि ॥

यं ब्रह्मा वरूणेंद्र रूद्र मरूतः स्तुन्वन्ति दिव्यैः स्तवैः ।
वेदैः सांगपदक्रमोपनिषदैर्गायंति यं सामगाः ॥
ध्यानावस्थित् तद्गतेन मनसा पश्यंति यं योगिनो ।
यस्यांतम् न विदुः सुरासुरगणाः देवाय तस्मै नमः ॥

** प्रवचन **

(कोई भी व्यक्ति प्रवचन पढ़कर बिना मार्गदर्शन के अभ्यास न करें)

मनुष्य में छुपी हुई एक रहस्य की बात

(आशीर्वचन-२३-७-९४ गुरु पर्व : रायपुर)

हरि ॐ

तमसो मा ज्योतिर्गमय।
असतो मा सद्गमय।
मृत्योर्मा अमृतंगमय। ॐ

आधुनिक काल में हम इतने भौतिकवादी हो गये हैं, इतने भौतिकवादी हो गये हैं कि हम अपने आपको भूल गये हैं, अपनी संस्कृति को भूल गये हैं तथा उन मनीषियों व महानुभावों को भूल गये हैं जिनके नाम से हम बिकते हैं अथवा बेचे जाते हैं। और क्या कहें, हम यह भी भूल गये हैं कि "सत्यंवद्, धर्मम् चर।"

कौरव-पाँडव शिक्षा ग्रहण करने के लिए द्रोणाचार्यजी के निकट रहे। शिक्षा की अवधि समाप्त होने पर वे सब अपने घर आये। बड़े-बड़े महानुभावों की सभा में उनसे सुख-दुख के संबंध में प्रश्न किया गया। सबने उत्तर दिया। जब युद्धिष्ठिर के पास आये और उनसे पूछा गया कि आपने क्या पढ़ा ? कुछ समझाइयें, कुछ कहिये तो वे मौन रहे। कुछ नहीं बोले। एक बार हो गया, दो बार हो गया, तीन बार हो गया तो इनके गुरुवर, द्रोणाचार्यजी उठे और उन्हें एक थप्पड़ जमाया। तुरन्त युद्धिष्ठिरजी का मुंह खुल गया। वे बोले–राजकुमार होने के कारण मुझे यह पता ही नहीं था कि सुख माने क्या और दुख माने क्या, तो मैं बोलता क्या। आज गुरुजी ने मेरे कल्याण के लिये मुझे थप्पड़ मारा है तो मैं सत्य कह सकता हूं। पर बीती तो कल्पना मात्र है, केवल आप बीती ही सत्य है। तुकाराम जी ने भी आप बीती के आधार पर ही कहा है - "तुका कहे वो ही संत, जो घात सहे अनंत।"

हमारे सुख-दुख का जो कारण है वह है केवल अहंकार और वो अहंकार दो रूप में हमारे सामने है जिसे हम माया कहते हैं। रामचरित मानस में तुलसीदासजी ने सीधे एवं सरल शब्दों में माया का वर्णन किया है-' मैं अरु मोर, तोर तैं माया, जेहि बस कीन्हें जीव निकाया"। मनुष्य अपने अलभ्य, सुन्दर एवं उत्तम जीवन को, जो उसे लाखों करोड़ों वर्षों याने कल्पान्तर के बाद मिलता है इसी मैं और मोर, तैं अरू तोर में फंसकर, जो सार है उसको छोड़कर असार के पीछे पूर्ण व्यय कर देता है और जब समय आ जाता है तो रोता है। क्यों रोता है ? वेदों में चार शब्द दिये हैं-विश्लेषज, मोहज, अनुतापज और आगामी दृश्य दर्शनज।

जिस समय काल मंडराने लग जाता है उस समय वो जीव अपनी मरणशय्या पर सोचता है। क्या सोचता है ? वह कुछ नहीं सोचता। सोच ही नहीं पाता। जैसे दो कागज या पुट्ठों को गोंद से चिपकाकर, सुखाने के बाद यदि अलग

करना चाहें तो वे जल्दी अलग नहीं होते और टुकड़े-टुकड़े होकर बिखर जाते हैं। उसी प्रकार जब यमदूत या काल आता है ले जाने के लिये तो वह तड़फता है। इतना तड़फता है कि वह बोल नहीं पाता और मूर्छाभाव में आ जाता है। थोड़ी देर बाद-भई वैद्य बुलाओ, डाक्टर बुलाओ, इसको बुलाओ, उसको बुलाओ कहता है। मोहज माने मोह, मोह उत्पन्न होता है कि इतनी जो कमाई किया, इतना जो जमा किया वो सब जा रहा है। जो लोग घेरे हुए हैं उनमें से भी कोई काम नहीं आ रहा है। जो आता है वही कहता है कि भई, इनका अंतिम समय आ गया है। अब ये बच नहीं सकते। वहां से वो घबराता है और उसका मोह टूट जाता है सबों से। फिर अनु-तापज-वो पश्चाताप करता है कि मानव जीवन प्राप्त कर हमने कुछ भी नहीं किया। सबके लिये कुछ न कुछ किया परन्तु अपने लिये कुछ भी नहीं किया। क्यों पश्चाताप करता है? क्योंकि इस शरीर से निकलने पर किस योनि में उसे भेजा जायेगा ये उसको दिखता है याने दृश्य दर्शनज। वो योनि पशु है, सर्प है, श्वान है, सूकर है या कुकर है इसको वो दिखता है। उस समय जैसे ही इसको बोध होता है कि अब कहां भेजे जा रहे हैं तो समझ लीजिये उस समय वहां अंत हो जाता है।

जब सीताजी की खोज में हनुमानजी निकले तब कालनेमि रूप बदलकर वहां पहुंचा और हनुमानजी से कहा कि भई, तुम स्नान करके आ जाओ तब हम तुम्हें दीक्षा देंगे। हनुमानजी ने नहाने के लिये जैसे ही पोखरी में पैर डाला एक मगरी उन्हें पकड़ने के लिए दौड़ी। हनुमान जी ने गदा उठाकर उसे मारा। मगरी उलट गई और उसमें से एक अप्सरा निकलकर, हनुमानजी की प्रार्थना करके इन्द्रलोक को चली गई। मगरी का शरीर ज्यों का त्यों पड़ा रहा। मगरी को भी अदृश्य हो जाना चाहिये था परन्तु वो अदृश्य नहीं हुई क्योंकि वो था केवल-

अवश्यमेव भोगतव्यम् कृतम कर्म शुभाशुभम।
ना भोक्तम् क्षीयते कर्म कोटिशर्जन्म शतैरपि॥

कल्प कल्पान्तर में आपके द्वारा किये गये कर्म का फल आपको भोगना ही पड़ेगा। आप छुटकारा नहीं पा सकते। छूटने का तो केवल एक ही मार्ग है जैसा कि भगवत गीता के इस श्लोक में दिया गया है-

नेहाभिक्रमनाशोऽस्ति प्रत्यवायो न विद्यते।
स्वल्पमप्यस्य धर्मस्य त्रायते महतो भयात्॥

ये जो अभिक्रम है अभि माने आंतरिक, बाह्य नहीं, अतर्जग के लिये जो कर्म किया जाता है, दूसरे शब्दों में आत्म साक्षात्कार हेतु जो कर्म किया जाता है वो कर्म ही निष्काम कर्म है। अन्यथा जितने भी कर्म आप करते हैं वे सकाम कर्म हैं और ये सकाम कर्म ही कारण हैं आपके लाखो, करोड़ों बार जननी जठरे शयनम् के।

"पुनरपि जन्मम् पुनरपि मरणम्
जननी जठरे शयनम्।"

तात्पर्य ये है कहने का कि यदि इससे आपको बचना है। उस नर्क में नहीं जाना है, उस नर्क से बचना है तो एक ही मार्ग है और वो

है-"अपने आपको जानना"। ऐसा अभिक्रम जिसने प्रारम्भ कर दिया है उसमें कोई प्रत्यवाय नहीं, "प्रत्यवायो न विद्यते"। उसमें कोई परिवर्तन नहीं होता। वो ज्यों का त्यों आपके मस्तिष्क की ज्ञान कोशिकाओं में जमा हो जाता है। इस प्रकार से जन्म-जन्मान्तर के नाना प्रकार के संस्कार आपके मस्तिष्क में प्रस्थापित हो जाते हैं। अब यदि हमारे मस्तिष्क में करोड़ों, अरबों ज्ञान कोशिकाएं हैं तो आप ही बतलाइये कि इस दुनिया में, इस संसार में, इस जग में हमने कितनी बार जन्म लिये होंगे। ये सोचने की बात है। क्या हम इतना बढ़िया उत्तम जीवन खाली मैं मेरा, तैं तेरा में व्यय कर दें। वैसे तो ये animal है। एक पशु है। इसी वास्ते शंकरजी को पशुपति कहा गया है। दसे इन्द्रियाणि मनः तेषामीषः अर्थात् दसों इन्द्रियों पर और मन, बुद्धि व चित्त पर जिनका अधिकार है।

आप जानते हैं कि ब्रह्मा, विष्णु, महेश आदि जो आये हैं, ये सब गुरु हैं। वो ईश्वर, वो Almighty जो है वो सबके लिए एक है। नाम में केवल भेद है लेकिन वो शक्ति एक है। वो दिव्य शक्ति है। वो Divine Energy है। आदमी साधारण होते हुए भी असाधारण है। क्यों सोचते हो कि हम पापी हैं, हम दुखी हैं, हमसे कुछ नहीं हो सकता है। ये रोना क्यों? कहां से आया रोना? ये रोना है क्या? ये दुर्बलता है तुम्हारी। बल होते हुए भी अपने ही बल से आप दुखी हैं। आपमें अंतःकरण है, मन है, बुद्धि है और चित्त है। मानें मन, बुद्धि चित्त और अहंकार है। इस अहंकार को क्यों नहीं बदलते, क्यों नही उसको शुद्ध सात्विक रूप देते। उस ईश्वर ने, उस Almighty ने सबसे पहले ब्रह्माजी को उत्पन्न किया।

"यो ब्रह्मणं विद्धाति पूर्वम्
यो वै वेदाञ्च प्रहिणोति तस्मै।
तं ह देवात्मा बुद्धि प्रकाशं
मुमुक्षवैं शरणंऽहं प्रपद्ये ॥

ब्रह्मा को उत्पन्न करके उसको एक ध्वनि दिया याने फूंककर एक ध्वनि उत्पन्न कर दिया। फिर एक पाठ पढ़ाया। उस वेद को पढ़ाया- "यो वै वेदाञ्च प्रहिणोति" ताकि उसको भूत, भविष्य, वर्तमान आदि का बोध हो, स्वयं का बोध हो और अपने आप में निमग्न, निम्मजित रहे तथा जग का कल्याण करें। 'तं ह' वो पर-मात्मा-ऐसा जो आत्मा परम है, अजर अविनाशी है, सर्वत्र है, सर्वज्ञ है, सबके पास है, एसी कोई जगह, कोई स्थान नहीं जहाँ वो नही है, उसका ध्यान करके आपको अपनी बुद्धि को पैनी करना है, Sharp करना है। तेज करना है वो है- "ध्यानं निर्विषयम् मनः" ऐसे ईश्वर की मैंने शरण ग्रहण की है।

तात्पर्य कहने का कि ब्रह्मा को पाठ पढ़ाकर फिर त्रिशक्ति की स्थापना की अर्थात् ब्रह्मा को सृजन कार्य देकर फिर विष्णाम प्रवेश करवाया। विष्णु शब्द की व्युत्पत्ति विष+नुक प्रत्यय से, "क" का लोप होकर विष्णु बना। ऐसी कोई जगह नहीं जहां विष्णु न हो। सब जगह प्रवेश है उसका। और शंकर - आप चाहे साधू हों, संत हों, महन्त हों, योगी हों, साधारण हों, भोगी हों, उद्योगी हों सबको साफ करके ले जाता है।

सब काल के वश में है, कालाधीन है। जब तक तुम्हारी आयु है, जब तक तुम्हें बोध है, तब तक तुम्हारा काम है–ध्यानं निर्विषयम् मनः। न नाक दबाने की आवश्यकता है न कान। केवल आप ध्यान करें। जिस प्रकार से आपको बताया जाता है या दिया जाता है उस प्रकार से थोड़ी देर आप अवश्य स्मरण करें। तुलसीदासजी कहते हैं-"सेइ नाम रूप बिन देखे, आवत हृदय सनेहु बिसेखे"। हमने न देखा है, न जानते हैं लेकिन नाम का जप करिये। जप करते करते शिथिलता आ जाये तो जिसका नाम है उसका जो रूप है उसका चिन्तन कीजिये। ये किसका नाम है? वो कौन है? वो क्या है? वो कैसा है? इस चिन्तन में आप डूब जाइये। तो "सेइ नाम रूप" तज्जपस्तदर्थ भावनम्। पहले जप करिये, भावना में आप निमग्न हो जाइये तो "आवत हृदय सनेहु विसेखे"। हृदय नाम मन का है। आपके मन में जो "वो" है, जिसका आप नाम ले रहे हैं, जप कर रहे हैं, वो अपने आपको प्रगट कर देता है लेकिन कब? "ध्यान निर्विषयम् मनः।" स्वविषयासम्प्रयोगे चित्तस्य मनसेवेन्द्रियाणाम् प्रत्याहारः। आपका जो स्व विषय है उसको आप धीरे धीरे चित्त में लय करिये। चित्त में धीरे धीरे लय होते हुए मन और इन्द्रियाँ अपने आप शिथिल हो जाती हैं। ये मन और इन्द्रियां शिथिल होकर अपने अपने केन्द्र में चली जाती हैं।

ऐसे समझ में नहीं आता तो इस प्रकार समझ में आ जाएगा कि आपके कान सुनना बंद कर देते हैं। आपको आंखों से दिखना बंद हो जाता है। आपकी श्वसन क्रिया धीरे धीरे शिथिल हो जाती है। आपकी रक्ताभिसरण संस्था भी धीरे धीरे शिथिल हो जाती है। आपके ज्ञान तंतु एवं गति तंतु भी शिथिल हो जाते हैं। ये छः प्रकार अपने अपने गोलक में चले जाते हैं। इसी को हम बाह्य संवेदना शून्यत्व का नाम देते हैं। यही है प्रत्याहार। प्रत्याहार के बिना धारणा योग्य नहीं है। धारणा हो ही नहीं सकती। "धारणासु च योग्यता मनसः"–जब मन धारणा के योग्य हो जाता है तब आप कुछ नहीं करते, वो अपने आप होता है। क्या होता है:-

"क्षीणवृत्तेरभिजातस्येव मणेर्ग्रहीतृग्रहणग्राह्येषु तत्स्थतदञ्जनता समापत्तिः"

तब आपका जो चित्त है, आपकी जो बुद्धि है, जो जड़ है, आत्मा जो चेतन है की चेतनता से वो चेतन सी होती रहती है। और जब ये छहों अपना काम छोड़कर गोलक में पहुंच जाते हैं तब आपकी बुद्धि 'अभिजातस्येव मणेर' स्फटिक मणीवत, पारदर्शक हो जाती है। तब आपकी बुद्धि पारदर्शकता को प्राप्त होती है और जैसे ही आपकी बुद्धि पारदर्शकता को प्राप्त हुई कि आप का काम बन गया।

"योगश्चित वृत्ति निरोधः" ये ठीक है परन्तु बिना सत्गुरु, बिना सत्पुरुष के एकाग्रता और निरोध होना कष्ट साध्य है। असाध्य कुछ भी नहीं है, पर कष्ट साध्य अवश्य है। इसलिये तुमको सत्गुरु चाहिये और सत्गुरु पर क्या चाहिये–"उतिस्ठत जाग्रत प्राप्य वरान्नि बोधत" अन्यथा क्षुरस्य धारा निषिता दुरत्यया, दुर्गम् पथः तत्कवयोः वदंति। ये ज्ञान मार्ग है। आपके

जीवन में ज्ञान की भी आवश्यकता है, भक्ति की भी आवश्यकता है और कर्म की भी आवश्यकता है। कर्मरहित आज कोई भी व्यक्ति नहीं है। अजगर जो होता है वो भी कर्म करता है लेकिन केवल अपना पेट भरने के लिये। हम अजगर तो नहीं हैं। हमारा काम है अपने आपको जानना और जानकर जो अनुभव प्राप्त हुए हैं उन्हें संसार में, सारे जग में, घर घर जाकर, व्यक्ति व्यक्ति के पास जाकर उसका प्रचार व प्रसार करना। ये हमारा कर्त्तव्य है, मानवीय कर्त्तव्य। मैंने इसे स्वीकार कर लिया है और घर बार द्वार सब छोड़ करके आज तक हम बाहर हैं। पर्यटन में हैं। तात्पर्य ये है कि ये जो प्राप्त होता है ये ज्यों का त्यों जमा रहता है आपके मस्तिष्क में, "प्रत्यवायो न विद्यते"।

इसी प्रकार "भक्ति बीज पलटे नहीं, जावे जुग अनन्त ऊंच नीच घर अवतरे, अंत संत का संत। ये अपने आप आगे बढ़ता चला जाता है। जब आप जन्म लेंगे, जहां तक जमा है, उसके आगे बढ़ते जायेंगे। ये बीज पलटता नहीं है। ये वो बीज नहीं है कि पानी बरस गया और सड़ गया। ये है-"पहले बीज अकेला"। आप एक बीज बोते हैं तो उसमें जड़ें आती हैं, तने आते हैं, पत्ते आते हैं, फूल आते हैं और फल आते हैं, कितने ही फल आते हैं कितने ही बीज होते हैं लेकिन उनकी जाति, उनका स्वभाव, उनका स्वाद, और उनके अन्य जो गुण धर्म आदि हैं सब ज्यों के त्यो रहते हैं। उसमें कोई अंतर है? कोई अंतर नहीं है। इसलिये पहले वो बीज अकेला-Almighty सदेकमेवम् अग्रम् आसीत नेहनानासि किंचन:। एक सत् के सिवाय और कुछ नहीं था पहले। ये सब सृष्टि बाद में हुई है। अब सृष्टि है तो कोई सृजन करने वाला भी है। ये बोध होता है हमें तर्क के द्वारा, तर्क के आधार से। जब ये प्रकृति है हमारे सामने, तो कोई तो भी बनाने वाला है। हम जाने या न जाने। तुलसीदासजी कहते हैं-नाम का जप करो और ध्यान में लाओ, तुम्हारा कल्याण होगा।

आप सभी जानते हैं कि बड़े श्रीमंतों के यहां बच्चे को दूध पिलानें के लिये जो धाय रखी जाती है वो उन्हीं की तरह पहनती, खाती है। बच्चे को खिलाती, पिलाती है पालन पोषण करती है परन्तु उसके मन में हमेशा ये बात रहती है कि ये बच्चा अपना नहीं है। उसी प्रकार हमारे भी वैयक्तिक, कौटुम्बिक, सामाजिक, धार्मिक व राजनैतिक कर्त्तव्य हैं। ये सकाम हैं लेकिन अपने साक्षात्कार के लिये जो कार्य किया जाता है केवल वही निष्काम कर्म है। "स्वल्पमप्यस्य धर्मस्य" याने आगे चलकर जब ये निष्काम कर्म अखण्ड हो जाता है जब एक वृत्ति बन जाता है तो "सोहमस्मि इति वृत्ति अखण्डा, दीप सिखा सोई परम प्रचण्डा"। आपकी बुद्धि में आत्मा स्वयं अपने आपको प्रगट कर देती है- "आत्मा स्वयं ज्योतिर्भवति"। आपको दर्शन हो जाता है। ये है धर्म। जबकि निष्काम कर्म अखण्ड रूप धारण कर लेता है। जैसे कि प्रकृति का कार्य है। प्रकृति की क्रिया का नाम धर्म है क्योंकि प्रकृति की क्रिया कभी बंद नहीं हुई। कोई उसे न रोक सका, न जान सका, न मालूम कब से है ये। ये पुरुष और प्रकृति दोनों अनादि हैं-"विद्ध्यनादि उभावपि" इस प्रकार अवाध गति से, पूरी शक्ति से जो चलती रहती है अखण्ड

रूप से, जिसको पूर्ण कहा गया है, कोई नहीं जानता इसे, ये कब से है।

बताया गया है कि "मौनुस्वारः हरिनवन्दे" तो हर पदार्थ में जो मकार उसको हलन्त कर दिया गया, अनुस्वार बना दिया गया। अनुस्वार का उच्चारण नहीं हो सकता, जब तक दूसरा उसके साथ जोड़ न दिया जाय। वो क्या है जो उच्चारित नहीं होता ? क्या है वो ? आप अपने आपको उठाते हैं, वस्तु उठाते हैं वो क्या है ? वो है शक्ति। वही दिव्य शक्ति है। वही Divine Energy है। वही आप हैं।

Paul Brunton का कहना हैं – If the universe had not been framed out of divine essence, none of the creation within it could hope truely to come into divine state.

ईश्वर अंश जीव अविनाशी, चेतन सहज अमल सुख राशि। आप तो सुख की राशि हैं लेकिन नहीं – हम तो दुखी हैं, हम तो पापी है, हम तो यूं है, हम तो त्यूं है। क्या है ये सब ? इसका कारण ये है कि हम अपने आपको भूल गये हैं। अपनी संस्कृति को भूल गये है। अपने बाप दादों को भूल गये है। अपना गोत्र भूल गये है, और उनको हम भूल गये है जिनकी हम संतान है, जिनकी ये देन है। आज पाश्चात्य के वैज्ञानिक सब भारत आ रहे है। वे इतने अग्रसर होते हुए भी संसार को महाप्रलय की ओर ले जा रहे है. लेकिन वो सब बचने के लिये भारत आ रहे है अब। तो तात्पर्य ये है कि जो अबाध गति से चल रहा है य ही धर्म है।

चाणक्य ने कहा है – चला लक्ष्मी, चला प्राणा, चला चलित संसारे और धर्म एकोहि निश्चला। ये जो धर्म है ये निश्चल है। ये परम है। ये निष्काम है और शांत है। अगर आपको शांति पाना है तो बाह्य जगत में शांति नहीं है। जब तक आप अपने आप में प्रवेश नहीं करेंगे, जब तक श्रद्धा-विश्वास को अपने आप में जागृत नहीं करेंगे तब तक आपका आंतरिक प्रवेश हो ही नहीं सकता। और जब तक आंतरिक प्रवेश नहीं होता तब तक शांति सैकड़ो कोस नहीं, सैकड़ों जन्म दूर है।

देखिये, ये प्रकृति जो हमारे सामने है, कल्प कल्पान्तर के बाद, मनवंतर के बाद भी ज्यों की त्यों है। अपना कार्य करती है। किसी के रोकने से रूकती नहीं। आप सकल्प भले ही कर लें परन्तु एक पौधा आप नहीं बना सकते। इसलिये प्रकृति की क्रिया का नाम धर्म है। बाकी हमको नहीं मालूम कौन क्या धर्म का विश्लेषण करता है, अर्थ करता है। अगर आपको जन्म-मरण के भय से दूर होना है तो स्वल्प-मप्यस्यत्रायते महतो भयात्। अगर थोड़ा भी एक बार भी Flash light माने प्रकाश आपकी बुद्धि में प्रकाशित हुआ तो इस जन्ममरण के भय से आपको छुटकारा मिल जाता है। ऐसा भगवान श्री कृष्ण ने भी हमको अभिवचन दिया है। बस अपने आपको जानो। मनुष्य कमजोर नहीं है। Man is not a weekening creation. Man can make his charecter & destiny. character याने चरित्र। जिसका नाम चरित्रय है। जैसे गुरूजी का थप्पड़ खाकर राजकुमार होते हुए भी युद्धिष्ठिर को न तो गुस्सा आया न तो उसके चेहरे पर किसी प्रकार की विकृति आई।

ये मानव जन्म कोई साधारण जन्म नहीं है। तात्पर्य कहने का कि Man can make his character and destiny. Therefore he is responsible for his own sufferings whatever is may be. May be good or bad. May be sweat or bitter Birth and rebirth depend on thywill. तुम्हारी इच्छा शक्ति पर निर्भर है। तुम अपने आपको नीचे उतारकर चाहे पाताल में पहुंचा लो या समाज में मुकुटमणि बन जाओ। सब तुम्हारे ऊपर निर्भर है। तुम्हारी इच्छा पर निर्भर है। हमारी कुछ ऐसी आदत, ऐसी वृति बन गई है कि अपनें को बचाने के लिये हम दूसरों पर आरोप करते हैं। ये आरोप करना बन्द करो।

हम बैठे बैठे देखते हैं, ऐसा है, ऐसा है-ये Realization नही है। Realize 'I am' (it is understood) but do not think I am yes, this is the main secret in it Your duty is to be i.e. to be possitive मैं तो अभी भी खोज में लगा हुआ हूं। तात्पर्य ये कि 'धर्म एकोहि निश्चला।' तुम धर्मात्मा बनो तब धर्म, अर्थ, काम मोक्षाणाम। ये धर्म जब प्राप्त होगा तब अर्थ की कोई कमी नहीं होंगी, कोई अभाव नहीं होगा। काम तुम्हारी कामनाएं पूर्ण होंगी। जब जैसा समय आयेगा आपके जीवन में, समाज अपने आप जमा हो जायेगा और सब कार्य सहयोग देकर पूरा कर देगा और मोक्ष याने बंधन से रहित। कौन सा बंधन? "साधना अनुष्ठान निरूपण लक्षणम् योगाः" । अगर आपको जगत में रहकर बंधन रहित होना है तो आपको साधना करनी होगी। जिस प्रकार से निरुपण किया गया है उसी प्रकार से रखना है अपने आपको, पूर्ण विश्वास से, बिना किसी संशय के क्योंकि संशयात्मा विनश्यति। और संशय कब तक दूर नहीं होता? तुलसीदास जी ने बताया है-

रघुपति-भगति करत कठिनाई।
सकल दृश्य निज उदरमेलि,
सोवे निद्रा तजि जोगी।
सोइ हरिपद अनुभवै परमसुख,
अतिसय द्वैत-वियोगी ॥

तथा सोक मोह भय हरष दिवस-निसि,
देस-काल तहँ नाहीं।
तुलसीदास यहि दसाहीन
ससय निरमूल न जाही ॥

ओम् शांतिः शांति शांतिः

सर्वेऽपि सुखिनः संतु सर्वे संतु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा
कश्चित दुःख भागभवेत् ॥

मंगलम् भगवान विष्णुः मंगलम् गरुड्ध्वजः।
मंगलम् पुण्डरीकाक्षः, मंगलाय तनो हरिः ॥

आनन्द हो आनन्द हो आनन्द हो।

★★

C/3-94

★ साधक कब स्थिति प्रज्ञ होता है ★

साधक प्रज्ञावान होता है षष्ठम भूमिका में तूर्यावस्था में, जबकि उसके, सारे संस्कारों का पूर्ण निरोध हो जाता है। जब तक उसके मस्तिष्क की कोशिकाओं में अंकित एक भी वासना, एक भी कामना बाकी है तब तक अनेकों, अनेकों बार उसे जन्म लेना पड़ता है।

प्रजहाति यदा कामान्सर्वानिपार्थ मनोगतान्।
आत्मन्येवात्मनातुष्ट: स्थिति प्रज्ञस्त दोच्यते ॥

याने जब "सर्वान कामान" जितनी भी कामनायें हैं सबका पूर्ण निरोध हो जाता है तब "आत्मा स्वयं ज्योतिर्भवति"। आत्मा ज्योति रुप में प्रगट होती है और एक प्रकाश के सिवाय कुछ भी नहीं रह जाता। याने निर्गुण निराकार, सगुण साकार हो गया। अर्थात् **Divinity menifests itself in the form of light** परन्तु आपको इससे भी परे जाना है। तब प्रज्ञा उत्पन्न होती है, आत्मा को जानने के लिये। तब आप प्रज्ञावान होते हैं। फिर जब ब्रह्मरंध्र **(Foramen of Monro)** में आसन जम जाता है तब आपके मस्तिष्क के **Billions of neurones** के सभी संस्कारों का निरोध हो जाता है। नाश तो कुछ होता नहीं।

"तस्यापि निरोधे सर्वगुण निरोधान"
तब निर्बीज समाधि होती है जिसका नाम है कैवल्य याने तब वो मुक्त हुआ; मर गया। परन्तु मरा नहीं।

"आत्मन्येव आत्मना तुष्ट:" इस प्रकार से जब आत्मा में प्रवेश हो जाता है तब तुष्ट हुआ याने वो तृप्त हुआ। अर्थात कुछ भी नहीं रह जाता। ये तुष्ट व्यक्तिवाचक है और तुष्टि भाववाचक। किसी को आप खाना खिलाते हैं तो बोलते हैं ना कि बड़ा संतुष्ट हो गया। बड़ा संतोष हुआ। ये तुष और तोष धातु से बना है।

एक साधना के सिवाय मैं कुछ नहीं जानता। न मैं पढ़ा हूं न लिखा हू। भागवत हमको जबरदस्ती पढ़ना पड़ा। वो भी दो तीन जगह, बस। मैं कोई पुराण नहीं जानता। मैं गीता के सिवाय कुछ भी नहीं जानता। रामायण, गीता पढ़ा, वो भी केवल तीन साल जब मैं गांव में था। लोग पढ़ने को लगाते थे, सुनते थे और मैं खाली पढ़ता था। पर समय आने पर कुछ न कुछ उसमें से याद आ ही जाता है। बचपन में हमारे नाना ने १००–१५० श्लोक भी याद कराये थे। कोई मंगलाचार के, कोई शिष्टाचार के, कोई पूजा–पाठ के, कोई नीति के, तो कोई संकल्प विकल्प के। वे श्लोक हमको आज काम दे रहे हैं। जैसे – जोशे सर्वकर्माणि

न भेद जन्यते आज्ञानाम, कर्म संज्ञिनाम।

और स्वयं भी उसी में रहना चाहिये। यानें किसी को बहकाना नहीं। वो विषकर्म है। जो जिस आश्रम में है, जहां है, जिधर है, यदि वो कुछ करता है, उसकी इच्छा है कुछ करने की तो उसको हटाना नहीं। उसको दबाना नहीं, सकुचित नहीं करना। उसका उत्साह बढ़ाना और

उत्साह बढ़ाकर जरा सा twist दे देना कि बस इतना सा, ऐसा और कर लो, हो जायेगा। और वो हो जायेगा। आशीष है न हमारी, अवश्य हो जायेगा। ये 'हो जायेगा' में ही सब कुछ है। किताबो में लिखा हुआ तो सभी पढ़ते हैं।

'न भेद जन्यते,' ये है। जिसकी जितनी समझ है उतना ही समझ लो। इसमें किसी का कोई दोष नहीं। मुझे मैंने जो कुछ भी मिला वो संतों व भक्तों के चरित्र से मिला। जो कुछ पाया मैंने इन्हीं से पाया।

जब आत्मा में प्रवेश हो जाता है तब वो divine ocean of ligh में आता है, आत्मा स्वयं ज्योतिर्भवति Divinity menifests it self in the form of light. और इसके बाद है स्वरुप शून्यम् स्थिति। अर्थात वो शून्य हो गया, मर गया। ये सब है सत्य की अनुभूति केवल साधना के द्वारा, अभ्यास के द्वारा। इसीलिये अपने पास कुछ भी नहीं। न कर्मकांड, न मंदिर, न तीर्थ, न यज्ञ, न जप, न तप, nothing, Not hinge का 'e' silent कर दो तो हो जाता हैं nothing इसलिए Not hinge, बस काम करो लेकिन यह मानकर कि सफलता-विफलता आपकी है न कि हमारी। हम तो निमित्तमात्र हैं। हम काम आपका ही कर रहे हैं इसलिये सफल-विफल जो हैं आप हैं, मैं नहीं। यही तो कृष्ण ने अर्जुन से कहा था कि "निमित्त मात्रंभव"। तू खाली निमित्त बन। ये देख मैंने सब करके रख दिया है। तू तो केवल निमित्त है। काहे को कांपता है, काहे को डरता है, अरे काहे को ?

अर्जुन कांप गया था। उसका चेहरा उतर गया। सब छूट गया, गिर गया, धनुषबाण वगैरह वगैरह सब। तब कृष्ण ने कहा अरे - अरे अरे - क्या कर रहे हो। तो ये है nothing विनोद में हम इस शब्द को notinge ऐसा भी मान सकते हैं। Do not tinge, what ever the action may be याने acting हैं उस।

आप जानते हैं Bees में जो workers होते हैं वे Honey बनाते हैं। इनमें एक male bee होता है जिसे Drone bee कहते हैं। ये काम नहीं करता। इस Drone bee के लिये एक queen bee होती है। उसका एक बार drone bee से संयोग हो जाय तो फिर वो उसे मार डालती है, छोड़ती नहीं। इस प्रकार एक ही बार के संयोग से (जिसे नियोग कहते हैं) प्रजनन होता है और जो Bees पैदा होते है उनमें फिर से एक drone bee पैदा होता है जो आराम से बैठकर खाता पीता है और अन्य शहद बनाते हैं। फल देने वाला queen bee है। तो कार्य से हम workers हैं। जो worker होता है वह स्वयं सफल-विफल नहीं है। जिसका काम है, work हैं जिसका, सफलता-विफलता उसको है ये समझ करके अपना जीवनयापन करना चाहिए। देखिये आप मुक्त हैं। इसको सहजावस्था कहते हैं।

उत्तमा सहजावस्था और अपना जो चिन्मन है, बना हुआ है। प्रतिनिधि सब जगह है। वो सब देखता है वो सब समझता है। वो सब जानता है। बस, वो साक्षी है। ये खाली उसका सिद्धान्त है कि वो साक्षी है। वो दिखे, न दिखे; मिले, न मिले; काम बने, न बने, हम वो नहीं जानते। वो साक्षी है, बस। वो जानता है,

बस और जो कार्य करने के लिये बताया जा रहा है वो जिसका कार्य है सफलता–विफलता उसको है; अपने को क्या ? हम तो निमित्त हैं । इसी वास्ते कृष्ण ने अर्जुन से कहा कि तू निमित्त बन निमित्त मात्रम् भव, हे अर्जुन तुम केवल निमित्त मात्र हो, ऐसा है । ये सहजावस्था है, बस । ये liberation है, आया न ख्याल में ?

तीन शब्द हैं मेरे पास – perfection, Liberation व solvation, तो इसको हम liberation में लेते हैं । मुक्त है वो

ऐकोऽपि कृष्णश्य कृतः प्रणामो
दशाश्वमेधाव भृते न तुल्यः
दशाश्वमेघी पुनरेति जन्म
कृष्ण प्राणामी न पुनर्भवाय ।

इसमें कृष्ण नाम आत्मा का है । वो कृष धातु और 'अन' प्रत्यय से बना है (कृष+अन) । कौन सा कृष्ण ? कृष जिसका 'ष' हलन्त है । कृष् = कर्ष, आकर्षण, attraction, जिसने सबको आकर्षित किया है, सबको धारण किया है । ऐसा जो महान है, वही ब्रह्म है । ब्रह्म = महान । तो एक बार, एक बार भी जिसे ज्योतिस्वरुप आत्मा का दर्शन हो गया उसकी तुलना में दस दस अश्वमेध यज्ञ करने वाले भी नहीं आते । और परिणाम क्या है ? दस अश्वमेध यज्ञ करने वाले का पुनर्जन्म है लेकिन कृष्ण प्रणामी न पुनर्भवाय । याने जन्म मरण का जो भयंकर फेरा है उससे वो निकल जाता है और मोक्ष के मार्ग में धीरे धीरे आगे बढ़ता है । वो मुक्त है । मैं जो कहता हूं, सच कहता हू । लेकिन ये कहने वाला मैं मैं नहीं हूं, य मेरे साथ में और कोई है । वो, वो है । वो तू है । वो और कोई नहीं, वो तू है । ये शरीर केवल भोग भोगता है। ये प्रकृति को भोगता है । प्रकृति भोग्या है, बुद्धि भोग्या है और 'आत्मा' ये भोगता हैं । ये केवल भोक्ता हैं । वो हमारे साथ में है, वो बोलता है, वो करता हैं, वो करवाता हैं । वो सब जानता है, सब समझता है और सब जगह हैं । सर्वत्र हैं, सर्वज्ञ हैं, सर्वशक्तिमान हैं । यहां मैं का कोई स्थान नहीं । यहां न Sex है, न जाति है, न पांति हैं । न कोई बूढ़ा है, न बच्चा हैं । न कोई आदमी है न कुछ हैं, न कुछ हैं । यहां है सिर्फ एक सर्वम् खलविदम् आत्मा, ब्रह्म याने महान । ब्रह्म माने कोई चिड़िया नहीं । ब्रह्म ये status हैं । जैसे कोई प्रोफेसर हैं, कोई डीन है जिन्हें सर्वाधिकार प्राप्त हैं, तो वो status हैं । stage नहीं, status हैं । ब्रम्ह उसका status है । ऐसा वो रखवाला मेरे पास है । वो साक्षी है, वो ही कर्ता धर्ता है । हम तो निमित्त हैं । इसलिये तुम अपने ऊपर मत लो । इस प्रकार से इसको सहजावस्था कहते हैं । यही सबसे उत्तम अवस्था है ।

उत्तमा सहजावस्था, मध्यमा ध्यान धारणा ।
मंत्र जपस्यात अधमा, होम पूजा धमाधमा ।

अधम से अधम भक्ति है होम-पूजा । मंत्र जपना ये अधम है केवल । ध्यान धारणा-कि भई थोड़ा ध्यान धारणा करके आते हैं ये मध्यम हैं और सहजावस्था उत्तम है । ये status प्राप्त करने के बाद कुछ नहीं रह जाता । मेरे पास witness हैं । कई डाक्टर लोग व समाज के अन्य लोग भी witness हैं । सब प्रकार से हम तंग किये गये हैं । सब प्रकार से test हुआ है हमारा । अरे ये शरीर तो मुर्दा है । इस मुर्दे में

एक चिड़िया बोल रही है, बस। ये जो काया है ये पिंजरा है, बस और वो जो पंछी अंदर है, वो बोल रहा है। मैं अपनी कहता हूँ। अपनी under standing के अनुसार। कबीरदास जी की ये जो कविता है "काया का पिंजरा डोलेरे, इक सांस का पंछी बोले इसे हमने बिलकुल मंत्र बनाया है और उसे मैं सत्य मानता हूं।

मैं कंगाल आदमी हूं। कंगाल आप जानते हो ना जिसके पास कुछ भी नहीं है। लेकिन कंगाल का अर्थ होता है कंकाल। माने खाली अस्थि-पंजर, माँस और अस्थि हैं। ये शरीर एक पिंजरा हैं और एक पंछी इसमें बोल रहा है। इसके अंदर जो साँस को चला रहा हैं, वो सांस जो हैं उसके द्वारा वो बोली निकलती रहती हैं, अनुभव की बोलियां। "काया का पिंजरा डोले रे, इक सांस का पंछी बोले। बस इतना ही जानता हूं मैं कि तन नगरी मन हैं मंदिर, परमात्मा जिसके अन्दर। दो नैन हैं पाक समन्दर, अरे पापी झूठ क्यों बोले रे। बस इतना ही हमने पकड़ा - इक सांस का पंछी बोले रे।

ये तो सब ठीक है। आगे हमें समाज में रहना हैं तो समाज की तरह रहना पड़ेगा। खुद के रहो या होकर रहो। बाकी मैंने खाली इतना ही, एक पद जो है उसका, उसको अपने जीवन में उतारा है। ये अहंकार नहीं, ये दंभ नहीं, ये पाखंड नहीं, ये झूठ नहीं, ये सच हैं। अब प्रदर्शन में तो आज तक कोई ला नहीं सका। रामकृष्ण परमहंस मर गये demonstration में लाने के लिये नहीं ला सके। उनने कहा कि मैं बहुत चाहता हू कि सबको दिखा दूं लेकिन 'मां' ने गला दबा दिया, मां ने गला दबा दिया। पढ़ो "रामकृष्ण परमहंस चरित्र"। विवेकानंद जी का योगदर्शन भी दस-पांच पृष्ठ पढ़कर छोड़ दिया। कहां छोड़ दिया वो भी बता देता हूं। "तमोगुण को रजोगुण में मिलावो और रजोगुण को सतोगुण में"। यहां जो आया तो - तमोगुण को रजोगुण में कैसे मिलायेंगे आप, ये तो दिया ही नहीं। रजोगुण को सतोगुण में कैसे मिलायेंगे ये तो उसमें दिया नहीं। तो वहां तक पढ़कर फिर छोड़ दिया। मेरे पास उनके दसों volumes हैं English में। मैं छोड़ दिया, मैं जो कहता हूं वो सब शास्त्र हैं, ये अनुभव हैं, केवल शब्द नहीं। मेरे पाकेट का नहीं। तो ये status हैं और ये विवाह के पहले करना चाहिये। १०-१२ साल के आप हो गये कि बस उसमें लग जाना चाहिए, परन्तु ९ साल के पहले नहीं। नौ साल तक आप पढ़ा दीजिये उसे जिधर ले जाना चाहते हैं याने भारतीय संस्कृति या आधुनिक जो चाहिये। अपनी बातचीत योग विद्या पर है, तो इस बारे में उसे पढ़ा दो, कंठस्थ करा दो नौ साल तक। उसके बाद उसको उतार दो अभ्यास में। लेकिन कोई सतगुरु मिलना चाहिये। कोई ज्ञानी मिलना चाहिये। जिस प्रकार बिना दर्पण के हम स्वयं की छवि नहीं देख पाते उसी तरह बिना सतगुरु के हम अपने आपको, आत्मा को नहीं देख पाते। सतगुरु अंजन लगाते हैं तभी हम अपने आपको जानने में समर्थ हो पाते हैं। ये status है। खाली बोलने से नहीं होता। you have to reach that status by Practice. गुरूदिश मार्ग से अभ्यास करते करते शनै, शनै साधक को अनुभव होते रहते हैं। धीरे धीरे वह पहले कार्यों से निवृत्त हो जाता है। उसके बाद उसके चित्त

की निवृत्ति होकर सारे संशय मिट जाते हैं और साधक प्रज्ञावान हो जाता है।

तस्य सप्तधा प्रान्तभूमि प्रज्ञा।

इस पातञ्जलि योग दर्शन के सूत्र के आधार से साधक बाहर-भीतर से शुद्ध हो जाता है।

पहले बाहर के ४ कार्यों से निवृत्त होता है। याने यह जान जाता है कि -:

१. क्या त्याग देने से और कुछ भी त्यागना शेष न रहे। (हेय)

२. क्या जान लेने से और कुछ भी जानना शेष न रहे। (ज्ञेय)

३. क्या प्राप्त कर लेने पर और कुछ भी पाना शेष न रहे (प्राप्याप्राप्य)

४. कौन सा कर्म करने पर और कुछ भी करना बाकी न रहे (चिकिर्षा)

इसके बाद होती है चित निवृत्ति जिसमें

१. चित्त की कृतार्थता जिसमे बुद्धि संस्कारक्षीण हो जाती है। स्फटिक मणिवत हो जाती है।

२. गुणलीनता जिसमें तमोगुण व रजोगुण के प्रभाव से मुक्त होकर सतोगुण शुद्ध हो जाता है।

३. आत्मस्थिति जब ये तीनों गुण प्रकृति में और प्रकृति से पुरूष में लीन हो गये तो क्या रहा ? आत्मा ही रहा यही आत्मस्थिति है। इसी को मनिषियों ने प्रज्ञा कहा है।

गुरुदिश मार्ग से चुपचाप मौन होकर अभ्यास कीजिए। By work, By worship By psychic control and by philosophy, By one or two or all of these and be free वो कहता है अन्दर देखो। अन्दर एक मार्ग है सुषुम्ना (Ependymal lining of central canal) - वो खोजना पड़ता है। शरीर के अन्दर है वो जगह। वो सब कुछ है।

हम चिन्ता करते हैं - हमारा होता नहीं। जब ये हमारा तुम्हारा आ गया तो सब गया। फिर आप शरण में कहाँ आए। आपने Surrender कहां किया। शरण माने जितना आपको अधिक से अधिक दे दिया गया है वैसा कम से कम बीस मिनट, दस मिनट, पांच मिनट, दो मिनट तो करो। इससे अधिक तो चाहिय भी नहीं। ये अपनी आदत बना लो। ये धर्म है।

धर्म क्या है ?

प्रकृति की क्रिया का नाम धर्म है ।

धारणात् धर्म इतत्युच्यते ।

'धर्म' शब्द की व्युत्पत्ति धारणा से है याने धर्म धारणा है । धारणा से कार्य करने के लिये दो प्रकार के विचार उत्पन्न हो सकते हैं ।
(१) उपकार (२) अपकार

उपकार में अपना व समाज का हित निहित है और अपकार में अपना व समाज का अहित ।
पहला कार्य – विचार प्रशंसनीय है एवं दूसरा निंदनीय । इस धारणा को धर्म का नाम दिया गया है ।
जैसे :– मंदिर में जाना, पूजा-प्रार्थना इत्यादि ।
धारणा शब्द सटोरिये भी काम में लाते हैं जैसे बाजार की धारणा । सट्टे में भी धारणा शब्द है ।

केवल धारणा फल नहीं देती । हमें सक्रिय होना पड़ता है, याने कार्य करना पड़ता है । उपरोक्त विचार से कर्म के भी दो प्रकार होते हैं ।
(१) इष्ट (२) अनिष्ट
इष्ट कर्म के लिये सरकार का भी अनुरोध होता है और अनिष्ट कार्य के लिये सरकार का विरोध होना निश्चित है । ये विषय धर्म का है । धर्म याने धारणा अर्थात विचार । तदनुसार कर्म की प्रधानता आती है । यहां जो दो प्रकार के कर्म हैं
(१) सकाम कर्म (२) निष्काम कर्म
सकाम कर्म वह है जिसमें फल की इच्छा है । जैसे- पूजा पाठ, मंदिर, तीर्थ, दर्शन, यात्रा, यज्ञ, योगादि सम्मिलित हैं । फल की अपेक्षा रखकर किया गया कर्म ही सकाम कर्म है, जिससे बंधनों से कभी छुटकारा नहीं मिल सकता ।

निष्काम कर्म, इसके विपरीत, दोष रहित एवं मुक्ति दायक होता है ।

नेहाभिक्रमनाशोऽस्ति, प्रत्यवायो न विद्यते ।
स्वल्पमपयस्य धर्मस्य त्रायते महतो भयात् ।।
(श्री भगवत गीता 2/40)

भक्तियोग वाले कहते हैं कि हमें तुम्हारे कर्म एवं ज्ञान योग की आवश्यकता नहीं है, परन्तु इन तीनों ज्ञान, कर्म एवं भक्ति के बिना कोई कार्य सिद्ध नहीं हुये ।
ज्ञान योग से कार्य की रचना का विचार (planning) रुप लेता है ।
कर्म योग से कार्य संपादन का अनुमोदन (Execution)होता है । एव भक्तियोग से कार्य रचना के लिये तैयारी (motivation)होती है । ज्ञान योग बुद्धि प्रधान है, कर्म योग क्रिया प्रधान है एवं भक्तियोग भावना प्रधान है ।
प्रकृति की क्रिया का नाम धर्म है । कार्यों में ५ प्रकार के कार्यों का विचार किया जाता है ।
वैयक्तिक, कौटुम्बिक, सामाजिक, राजनैतिक एवं धार्मिक जिसमें मनुष्य अपने एवं सामाजिक हित के लिये सक्रिय होता है ।

इसी को कहते हैं **Evolution – Movement according to plan**
"सत, रजस, तमस सभवः प्रकृति"
सत् याने लाभदायक विचार (Constructive)

जो कि होता है । रजस में activity याने movement या सक्रियता निहित है। तमस से destruction याने विनाशकारी क्रिया सूचित है ।

इस प्रकार मनुष्य जीवन भर उक्त तीन प्रकार के कर्म करके आयु से विदा लेता है । यही सकाम कर्म का फल है । अन्त समय में उसे पश्चाताप होता है । यहां बंधन है एवं जन्म का कारण है ।

निष्काम कर्म – सत, रजस, तमस, साम्यावस्था: प्रकृति सत्पुरुष, सद्‌गुरु के सानिध्य में आकर या सद्‌गुरु द्वारा मार्ग दर्शन प्राप्त कर आत्मानुसंधान (आत्म साक्षात्कार) के लिये कर्म किया जाता है । उसी को निष्काम कर्म कहा जाता है ।

जब निष्काम कर्म के धर्मरुप प्रभाव से यह त्रिगुणमयी (सत, रज, तम) बुद्धि सतत (निरंतर) अभ्यास द्वारा साम्यावस्था को प्राप्त होती है (याने गुणलीनता होती है) तब बुद्धि की सारी वृत्तियां क्षीण हो जाती है । और वह मणिवत अपने आप प्रकाशित हो जाती है । इस प्रकार बुद्धि जब विशुद्ध हो जाती हैं तब निष्काम कर्म के प्रभाव से आत्मा, शुद्ध-बुद्धि में अपने आपको स्वयं ज्योति के रुप में प्रगट करती है। ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार स्वच्छ जल में चंद्रमा का प्रतिबिम्ब अपने आप प्रगट होता है । एक बार भी, जरा भी प्रकाश आ जाय तो मानव (साधक) जन्म मरण के भय से छुटकारा पा लेता है ।

आत्मानुसंधान का यह जो अभिक्रम (क्रिया) है उसका कभी नाश नहीं होता और उसका उल्टा फल दोष भी नहीं होता है ।

निकल जा अक्ल से आगे,
ये नूर, चिरागे रहगुज़र है, मंजिल नहीं ।

और

हर सहारा बेअमल के वास्ते बेकार है ।
आंख ही खोले न कोई, तो उजाला क्या करे ?
गुणलीनता के पश्चात आती हैं आत्मस्थिति ।
यही है आत्मसाक्षात्कार ।

हमारी आदत हैं- कुछ बना नहीं तो दूसरे को दोष देना । बना, तो मैंने किया, न बना तो दूसरे को दोष । हम अपनी कमी कभी सोचते नहीं

मैं रात में दुआ करता हूं
लेकिन कुबूल नहीं होती ।
तो मैं समझता हूँ, यकीनन,
अभी मुझमें कुछ कमी है ।

सत्वपुरुषयो: शुद्धि साम्ये कैवल्यम् (पातं 55)

इस तरह गुणलीनता से मानव मुक्ति याने कैवल्य प्राप्त करता है ।

The goal must manifest within by work, worship, psychic control & philosophy. By one, two, three or by all these four and be free.

(vivekanand)

मेरी यही जिंदगी है कि सबको फैज पहुंचे
मैं चिरागे रहगुज़र हूँ, मुझे शौक से जलालो ।

कृष्ण जैसे divine beings जन्मते नहीं प्रगट होते हैं, बार बार मनुष्य जाति को सही मार्ग बताने के लिए ।

इसी प्रकार सद्गुरु भी मानव को सही, योग्य मार्ग बताते हैं । सद्गुरु बिना मुक्ति नहीं । जैसे पानी का farmula H_2O है । याने पानी हाइड्रोजन व आक्सीजन से बनता है परन्तु इस क्रिया का क्रम एव क्रिया का ज्ञान सबको नहीं । गुरु के बताये बिना पानी मिलेगा नहीं । इसी तरह मानव को योग्य मार्ग गुरु बताता है ।

(दिनांक 7.7.1990 गुरुपूर्णिमा के अवसर पर इंदौर में परमपूज्य गुरुजी के उद्बोधन के मुख्य अंश)

आजकल हमारा धर्म क्या है ? **Habitual action,** हम एक आदता बना लेते हैं – जैसे मन्दिर जाना मेरा धर्म है, ये धर्म नहीं है । "धारणात् धर्म इत्युच्यते"-धारणा है । आपने जो बाहर की Planning बनाई वो किसी काम की नहीं है । भीतर की धारणा, भीतर की Planning चाहिये – सद्गुरु द्वारा जो दी गई है ।

O O

चन्द्रमा एक है । उसका प्रतिबिम्ब जल में पड़ता है । दस घड़े लगा दो, सब घड़ों में किरणें आ जाएंगी । चन्द्रमा एक है । उसकी किरणें भी वही चन्द्रमा है । आपको एक लम्बी लकीर दिखाई देती है लेकिन जल में पहुंचने के बाद दस घड़ों में दस चन्द्रमा दिखाई देते हैं । चन्द्रमा दस नहीं, एक ही है । चन्द्रमा और किरणों में कोई भेद नहीं है । इसे divine quantum of energy कहते हैं ।

O O

साकार-सा शक्ति है व्याकरण के हिसाब से । कार-कुरु धातु से कार्य शब्द । जो कार्य आप करेंगे वो उसी शक्ति द्वारा करेंगे । शक्ति के द्वारा ही सब कुछ होता है । ये हम भूल जाते हैं और कहते हैं- "मैं करता हूं" ।

O O

'नेहाभिक्रम् नाशोस्ति प्रत्यवायो न विद्यते"– ये अभिक्रम है । भीतर का अभिक्रम ये कर्म करना है । ये निष्काम कर्म है । बाकी तो सब सकाम कर्म है । हम जो करते हैं – स्वर्ग नर्क के लिये वो सब कर्म है । निष्काम कर्म ये है- "प्रत्यवायो न विद्यते" इसका नाश भी नहीं होता, न ही उसका फल या दोष होता है ।

✳ अहं एवं संशय ✳

अहं कई जन्मों तक बना रहता है। इसे अनेक जन्मों के संस्कार, वाक्य एवं आकृति से भोगना पड़ता है। जब तक एक भी संस्कार बाकी है हमें जन्म लेते रहना पड़ेगा, उसे भोगने के लिये। यह अहं तब तक ही काम देता है जब तक पुण्य हैं। ऐसा भोगते-भोगते जब तीनों गुण (सत्, रज एवं तम) बुद्धि के शुद्ध हो जाने से, निर्मल हो जाने से, प्रकृति में लीन हो जाते हैं एवं प्रकृति से पुरुष में लीन हो जाते हैं, तब वह अवस्था प्राप्त होती है, जिसे सिद्धावस्था कहते हैं। इस सिद्धावस्था के प्राप्त होते तक 'अहं' भोग के रूप में बना ही रहता है।

वासना का बीज 'अहं' है। यही पुण्य-पाप का कारण है। 'मैं' या 'अहं' के समाप्त होने पर ही हम उस अवस्था में पहुंचते हैं, जिसे निर्बीज समाधि कहा गया है। इस स्थिति को प्राप्त करने पर साधक ज्योतिर्मय पिंड हो जाता है। हम जिसे ईश्वर या ईश्वरत्व कहते हैं, वह मायोपाधि (माया की उपाधि) है। जिसे हम योग माया कहते हैं, वह ईश्वरीय है तथा यह पराशक्ति से प्राप्त हो जाती है। परन्तु हमें इससे भी ऊपर जाना है जिसे Above time & space कहा गया है। यह अवस्था पूर्वोक्त निर्बीज अवस्था ही है, जिसमें साधक ज्योतिर्मय पिंड हो जाता है। कहा गया है **'God is light'** और इस स्थिति को प्राप्त कर लेने के बाद उस साधक का संसार में जन्म नहीं होता। संसार के मायने क्या हैं? सम्यक सार अर्थात साधना इसी संसार में रहकर समाज में रहकर की जा सकती है। इस अपने आप को जानने की जो साधना है इसी को पुरुषार्थ कहा गया है। जो इस 'पुरुषार्थ' को मानव जीवन पाकर भी सम्पन्न नहीं करता, वह मनुष्य के शरीर में भी पशु से भिन्न कैसे हो सकता है?

तात्पर्य यह कि साधना करते करते, अभ्यास करते करते साधक अहं से मुक्त हो सकता है। लेकिन समस्या क्या है? वो ये है कि इस बहुजन समाज में सब प्रकार के लोग मिलते हैं। कोई भले तो कोई बुरे। कोई प्रगट रूप में दुष्ट है तो कोई गुप्त रूप में। इनकी कमी नहीं है। तब क्या इनके भय से संसार छोड़ देना होगा? नहीं, हमें तो निर्भय होना है। संसार छोड़कर, जंगल में जाकर तप करने वाला पलायन करता है। वह संसार से विभक्त है, तब वह भक्त कैसे होगा? जो विभक्त है, वह भक्त नहीं हो सकता। तब क्या करना होगा? हमें दुष्ट प्रवृत्तियों का निरोध करना होगा। तब कीचड़ में कमल की स्थिति होगी। ऐसा कैसे संभव होगा? यह अभ्यास मात्र से ही संभव है।

निर्बीज समाधि की स्थिति में जब साधक पहुंचता है, तब विषय का जानकार न होने के कारण डाक्टर कहता है मर गया। वह जो साधक सुषुप्ता अवस्था में है, मर गया है। लेकिन वस्तुत: वह मरता नहीं है। सिद्धावस्था में साधक की जब यह स्थिति हो जाय तो २४, ३६ घंटे रुकना चाहिये। जब तक बॉडी फूलने व अकड़ने न लगे

तब तक उसे मृत्यु नहीं समझना चाहिये। २४ से ३६ घंटे बाद ही उसकी अंतिम क्रिया करनी चाहिये।

हम विचार कर रहे थे कि जब तक 'अहं' है जन्म लेना होगा। इस 'अहं' को आत्म शक्ति से ही हटाया जाता है। आत्मा ही शक्ति है। कचरा साफ होने के बाद जब तुम सोये रहते हो, जीव हो, सोये रहने तक ही जीवत्व है,-परवश हो। कहा भी गया है-

"परवश जीव स्ववश भगवन्ता।"

अभ्यास करते करते अंतर्मुखी होकर साक्षी भाव से देखते जाइये, सब कुछ अपने आप होता चला जाता हैं। धीरे धीरे अहं भाव समाप्त हो जाता है। अहं के समाप्त होने पर निर्बीज समाधि की स्थिति प्राप्त होती हैं, और यही आत्म साक्षात्कार हो जाता है लेकिन संशय नहीं होना चाहिये। क्योंकि संशय आत्मा का विनाश करता है। कहा गया है "सशय-आत्मा विनश्यति"

जब जीव इस इस स्थिति में जाता है तब भोग समाप्त हो जाते हैं। तब वह अपने आप में स्थिर हो जाता है। इसी को सम्यक चरित्र कहा गया है एवं सम्यक चरित्र की प्राप्ति ही मोक्ष है।

(कैवल्य से)

✻✻

जब तक तुम्हारी बाहर साँस चलती है तब तक विचारों के उदय अस्त का कभी निरोध नहीं होता।

✻✻

आपकी बुद्धि जिसमें समाहित हो जाय, वही समाधि है। हम समाधि लगायेंगे, हमको समाधि लगाना है ऐसा कहना न जानने के कारण है। भ्रम होने के कारण हैं।

✻✻

जिनके स्मरण मात्र से किसी का भी काम बन जाए चाहे वह शिष्य हो या न हो। ऐसा सद्गुरू, सत्पुरुष होना चाहिये।

✻✻

अपने आपको जानने का अधिकार हर मानव प्राणी को है।

★ ईश्वर क्रिया है ★

ईश्वर कोई व्यक्ति, वस्तु या पदार्थ नहीं है। वह किसी भी प्रकार की संज्ञा नहीं है। वह तो है अखण्ड क्रिया, जो कि प्रकृति में रात और दिन अबाध गति से सतत चल रही है। ये है निरन्तर चलने वाली उत्पत्ति, स्थिति एवं लय की क्रिया जो अनादि और अनन्त है। परन्तु ये सब करता कौन है ? होता कैसे हैं ? ये क्रिया, है क्या ?

मैं तुझमें हूँ, तू मुझमें है और प्रकृति सब कार्य करती है। इसलिए कर्म प्रक्रिया का नाम है और प्रकृति की क्रिया का नाम धर्म है। ये धर्म किसका है ? उसी का, जिसने सब सम्हाला है। सबको उत्पन्न किया है। धारण किया है एवं समय आने पर लय करेगा। ये धर्म; है क्या ?

जो जैसा करता है उसको वैसा फल मिलता है। आप यदि कहें कि आज ही बीज बोया है और आज ही फल मिल जाय, तो ऐसा नहीं है। प्रकृति के नियम है। वो सदा कार्यरत है, सदैव सक्रिय है। आप बीज बोते हैं तो अंकुर आता है। वो अंकुर कैसे आया ? क्या आपने लाया ? नहीं। क्या आपने वृक्ष बनाया ? नहीं। ये सब प्रकृति की क्रिया है। जो सतत चलती रहती है।

प्रकृति विराट रुप है ईश्वर का। ये कृति है ईश्वर की और वो उसमें समाया है याने "वासुदेवमयं जगत"। सारा जगत वासुदेवमय है अर्थात् प्रकृति जो है वो वासुदेव है। वासुदेव ही प्रकृति है। इसलिए जो कार्य होते हैं वह प्रकृति ही करती है और प्रकृति माने वासुदेव। और जो क्रिया है वही वो है याने **God is not a noun, God is a verb**.

सकाम कर्म सीमित है तथा निष्काम कर्म असीम व अखण्ड। कर्म प्रकृति की क्रिया का नाम है। ये निष्काम कर्म जब पूर्णत्व में आ जाता है तो धर्म बन जाता है, जब अर्जुन द्रोणाचार्य जी के पास धनुर्विद्या सीख रहे थे तब उनका पूरा ध्यान था विद्या सीखने में, उसका आंकलन करने में और जब निष्णात हुए और सब प्रकार की परीक्षा में पास हुए तो गुरुजी अपने आप प्रसन्न हो गये। इस प्रकार प्रकृति अपना कार्य अपने आप करती है। आप कुछ नहीं करते।

हम कहते हैं ना, कि भई, हम अपनी टांगों पर चलकर यहां आये हैं। मैं कहता हूं यह अहंकार है। जिसके द्वारा ये सब होता है उसे हम भूल जाते हैं। तुम चलकर आये, किसके द्वारा ? अगर वो न होता तो तुम आ सकते थे क्या ? मैं हमेशा बोलता हूं कि

"जैसी होनी होय है वैसे मिले सहाय,
आप न जायें तांहि, तांहि तहां ले जाय।

ये प्रकृति है, उसको सहायक मिल जाता है। ये जो प्रकृति है वो ले जाती है, हम नहीं जाते। एक कहानी बताता हूं तोते की, जो काशी में पिंजरे में बन्द था और मौत के भय से थर थर कांप रहा था। गरूड़ जी उसकी ऐसी हालत देखकर उसे अपनी पीठ पर बैठकर हिमालय की

कंदरा में ले जाते हैं और कहते हैं कि लो, अब यहां यमराज तो क्या, उसका बाप भी नहीं पहुंच सकता। परन्तु तोते की मौत तो वहीं लिखी थी। जैसे ही गरूड़ ने तोते को वहां पहुंचाया, उसकी मृत्यु हो गई। यमराज ने गरूड़ से कहा कि तुमने तो मेरा काम कर दिया। याने प्रकृति अपना काम करती है। होना नहीं गया, प्रकृति ने गरुड़ द्वारा वहां पहुंचा दिया।

प्रकृति ही विराट स्वरुप है और हम कृति होने के नाते, प्रकृति का एक अंग होने के नाते, उसी में हैं। इसलिये करता कौन है? वही, जो शक्ति है। वो जो प्रभाव है, भाव का प्रभाव। भाव मण्डल का प्रभाव।

किसी ने पूछा कि जो महापुरुष है उनके पास जो जाते हैं उनको लाभ होता है क्या? हां। मैंने कहा – लाभ होता है। ये जो सिद्ध पुरुष होते हैं, उनका औरा रहता है, याने वलय रहता है। उनने उसे भाव मण्डल कहा है। वो जो भाव मण्डल है वो जितने क्षेत्र मे फैला रहता है उस क्षेत्र के अन्दर जो कोई भी आता है उसको मिलता है। क्या मिलता है? शांति। तभी तो वो बार बार आता है। ये वलय काम करते हैं याने वलय द्वारा क्रिया होती है तभी तो उसका प्रभाव पड़ता है। महापुरुष तो कुछ बोला नहीं, सिद्ध पुरुष ने तो कुछ बोला नहीं लेकिन काम हो गया। वलय से काम बन गया। इस-लिए वो करते हुए भी नहीं करता और नहीं करते हुए भी करता है। यही **paradox** है। परस्पर विरोधी है। यही **Contradictory** है इसलिये कोई समझता नहीं। ये है "प्रभावोकिंच्थुज्यते"।

ये जो प्रभाव है, इससे क्या नहीं हो सकता। कर्तुम अकर्तुम–करते हुए भी नहीं करता और "अन्यथा कर्तुम" याने क्या नहीं कर सकता। वही तो है कर्त्ता। यदि वलय द्वारा क्रिया न होती तो उसका परिणाम कैसा होता। वलय में प्रवेश किया, घुसा उसमें तो क्रिया हुई। इसीलिए प्रकृति की क्रिया का नाम धर्म है। इसलिये तुम कुछ नहीं करते। प्रकृति मुझमें है और मैं प्रकृति में हूं।

कृष्ण ने अर्जुन से कहा– देख मेरा विराट स्वरुप, अपने सम्बन्धियों और गुरुजनों को तुम नहीं मारोगे। उन्हें तो हम पहले ही मार चुके हैं। इसलिये ये वाक्य कितना अच्छा है – **God is a verb.** मैंने कहा – प्रक्रिया का नाम धर्म है। धर्म माने नियम। वो अपने नियम के अनु-सार, नियमों के अन्तर्गत कार्य करती है। तुम्हारे बोलने से नहीं करती। वो तुम्हारे हाथ में नहीं है। तुमको फल अभी चाहिये तो वो नहीं मिलता। क्योंकि तुम्हारे हाथ में नहीं है।

एक तालाब में तुम ढेला डालते हो तो उससे वलय बनते हैं, **waves** बनती हैं जिनको तरंगें कहते हैं। वो तरंग किस जीव को लगती है। किनारे तक जाती हैं या नहीं। क्या होता है, कितने लोगों को हानि होती है ये तुम्हारे वश में नहीं है। तुमने बस ढेला मारा। वहां वो गया या नहीं, बस तुम्हें सिर्फ यही देखना है। तरंगें कहां तक जाती हैं, क्या होता है वो नहीं। तुमने जो किया वो देखो। क्या होने वाला है ये देखना तुम्हारा काम नहीं। तुम्हें जो देखना है वो तो देखते नहीं और जो नहीं देखना है वो देखते हो।

इसलिये इस सूत्र को दुनियां में कोई नहीं काट सकता कि – "कर्तुम अकर्तुम अन्यथा कर्तुम ससक्तः"। वो करते हुए भी कुछ नहीं करता और नहीं करते हुए भी सब कुछ करता है। उस औरा से क्या नहीं कर सकता ? ससक्तः। उससे बड़ा और कोई नहीं है। वो महान है। इसीलिए उसे अनादि और अनन्त कहा गया। आज तक न उसको किसी ने पाया है, ना जाना है। यदि जान लिया तब तो आदमी ही बड़ा हो गया। मनुष्य बड़ा हो गया। आप अपने आपको महान बना सकते हैं। कैसे ? योग से। बुद्धि आत्मयोग से सूक्ष्मता को प्राप्त होती है और बुद्धि की सूक्ष्मता की सीमा साक्षात्कार है। हम कुछ करें या न करें परन्तु हमारे भीतर जो शक्ति है, कुंडलिनी शक्ति, महाशक्ति, दिव्य शक्ति वो सदैव सक्रिय है। हम जांगे या सोयें वो अपना काम निरंतर करती रहती है।

अच्छा, आनन्द हो, आनन्द हो, आनन्द हो।

मुंगेली / दि. 27.2.95

***

हमारे वृहत् मस्तिष्क में जिसे **Cerebrum** कहते हैं में **Limbic System** है जहां आहार, निन्द्रा, भय ये सब हैं। लेकिन ज्ञान विशेष एवं अधिको विशेषो क्या है ? जो सर्वज्ञ है उसका अंश, वो ज्ञान का अश हमारे में हैं। ये बीज हम भूल गये हैं। मानव प्राणी में ये विशेष बात होने के कारण वो अपने संकल्प से, अपने शब्द से दृढ़ होकर उस अजन्में और स्वयंभू को फार्म (प्रारुप) में ले आते हैं याने जिसकी कोई आकृति नहीं, रूपरेखा नहीं, उसको रूपरेखा में ले आते हैं। इसलिये ये मानव प्राणी विकसित प्राणी है।

***

सुख, दुख, लोभ, मोह आदि जो नाना प्रकार के विकार है जिनसे बुद्धि भरी पड़ी है वो सब कचरा हमारी रुकावटें हैं। किसान जैसे अपनी रुकावटों को दूर करता है – मेड़ को फोड़ा और पानी अपने आप बहकर सब खेत में भर जाता है। पानी को लाना नहीं पड़ता है। हमें तो सिर्फ अपना कचरा, जो है बाँध, मेड़ वो रुकावटें दूर करना है अभ्यास से। बाकी कोई चीज नहीं हैं।

※ प्रेरक उद्बोधन ※

जब अकार, उकार, मकार ये तीनों मिल जाते हैं। जागृत, स्वप्न, सुषुप्ति ये तीनों जब मिल जाते हैं याने स्थूल, सूक्ष्म और कारण शरीर जब मिल जाते हैं याने तमोगुण, रजोगुण और सतोगुण इन तीनों पर जब संयम हो जाता है। "त्रयं संयमात्"–जब तीनों पर संयम होता है तब आप उस शरीर में जाते हैं जहां "आत्मा स्वयं ज्योतिर्भवति"। ये Goad तुम्हारे ही अन्दर हैं, दूसरी जगह नहीं। तुम्हारे ही अन्दर वह प्रगट होता है। उसका अविर्भाव, प्रादुर्भाव वहीं होता हैं। ये मस्तिष्क में होता है। "त्यत् तिष्ठति दशांगुलम्–परिणाम जो हमारा वृहत् मस्तिष्क है वहां पूर्ण का पूर्ण ही होता है। "पूर्णमदः जीवा"-अगर ये जो आत्मा आपमें है ये पूर्ण न होता तो पूर्णत्व की ओर आप जा भी नहीं सकते और पूर्ण का नाम भी नहीं रह जाता।

※※

"धर्म किये धन ना घटे जो सहाय रघुवीर"–आत्म साक्षात्कार के बाद या आज्ञा चक्र में आने के बाद या तूर्यावस्था में आने के बाद धन कभी घटता नहीं, आप चाहे कितना ही बांटे। अभी तो डर है कि दे देने के बाद हम क्या करेंगे। बुद्धि आत्मस्थ हो करके जो प्रेरणा आत्मा में रहकर प्रेरित करती है उस प्रेरणा को धारण करके जब बुद्धि कार्य करती है तब "धर्म किये धन न घटे जो सहाय रघुवीर"।

※※

इतना बड़ा तीर्थ आपके अन्दर हैं कि आप सबको उस पार पहुंचा सकते हैं। 'तीर' माने पार, 'थ' माने रहने को। इस पार सब दुखी हैं। फंसे हुए हैं। मृत्यु के ग्रास में पड़े हैं। विकराल काल के गाल में फंसे हैं। उन्हें उस पार ले जाना है।

※※

'स्व' माने आत्मा। आत्मोत्थान के लिये जो प्रक्रिया चाहिए, आपको वो अवश्य मिली है। उसे प्राप्त करने के बाद जिस प्रकार से सारे कार्य आप संसार में करते हैं। उसी प्रकार से अपने लिए भी कुछ करिए। आप केवल औरों के लिये कार्य करते हैं। सब लोग आपसे

कार्य लेते हैं। समाज वाले, राष्ट्र वाले, धर्म वाले, घर वाले सब कहते हैं कि हमारा करो। और अंत में कह देते हैं कि हमारे लिये क्या किया ? कोई ये नहीं कहता कि तुम्हारा कुछ काम हो तो हम सहायता करें। तात्पर्य ये है कि हमें अपनी सहायता स्वयं करनी चाहिए। हमको अपने लिये स्वावलम्बी होना चाहिये माने 'स्व' जो आत्मा है उस पर अवलम्बित होना है।

पूर्णत्व को पाने के लिये 'स्वधर्म निधनं श्रेय' याने स्वधर्म में रहकर अपना उद्धार करने की जो प्रक्रिया है उसमें यदि आपका निधन भी हो जाय, शरीर भी गिर जाय तो भी श्रेयस है। तो भी आपका जीवन श्रेष्ठ है और आगे भी श्रेष्ठ होगा। 'सुचिनाम श्रेयताम् गेहे'– अगला जन्म भी उत्तम श्रीमंतों के यहां पवित्र कुल में होगा और जन्म से ही सारी शक्तियां पाकर आप बहुत विकसित हो जायेंगे। विकसित होकर आप जन्म लेंगे और अपना कल्याण करते हुए समाज का भी कल्याण करते रहेंगे–ये धर्म है।

मैत्री भाव रखकर, ऐक्य रखकर, अपने घर में, अपने बाल बच्चों के बीच स्त्री से व्यवहार रखते हुए भी अपने आपको न भूलें। अपने आपके लिय इस प्रकार से समय निकाल कर थोड़ा बहुत प्रयास करें। एकांत में बैठ, चित्त शुद्ध कर जो प्रक्रिया आपको दी गई है साधना करने के लिये, उसमें लग जाओ। फिर जो सुख है, वो अपार है। उसका अंत नहीं अनन्त है। "सत्यं ज्ञान अनन्तं ब्रह्म"–आप महान हो जायेंगे।

"जनम जनम के पुण्य जब, उदय होय इक संग, जावे मन की मलिनता, तब भावे सत्–संग" सत् संग माने किताब नहीं, वो तो प्रसंग है। सत् माने आत्मा, **Divine energy,** दिव्य शक्ति, तब उस ओर आदमी झुकता है। तब भावे माने तब उसका भाव उस ओर झुकता है। ये सहज नहीं है, हर एक का काम नहीं है। झुकना हर एक का काम नहीं है। अनेक जन्मों के पुण्य जब एक साथ उदय होते हैं तब उधर कोई झुकता है याने अपनी ओर झुकता है।

तप – इस शब्द को उल्टा कर दीजिये, उसका नाम है पत – माने अपने पर भरोसा रखकर।

※ ※ ※

जिसका कोई सहारा नहीं है, जिसका कोई भी नहीं तथा अभ्यास करके या मार, डंडे खाकर, संसार से परित्यक्त होकर, नास्तिक भी हो तो एक बार उस आत्माराम को आवाज देता है कि बाबा तू ही है और कोई नहीं। त्वमेव माता च पिता त्वमेव....।

※ ※ ※

कृष्ण जैसे महान, दिव्य शक्ति सम्पन्न भारत में ही नहीं, सार जग में नहीं है। उनने भी कहा है कि बुद्धि जड़ है। हम अक्सर आरोप करते हैं कि भगवान ने ऐसा किया, ये बिगाड़ दिया–ये सही है क्योंकि बुद्धि को जड़ कहा गया हैं।

※ ※ ※

मुट्ठी में जैसे हवा बांधना दुष्कर है उसी तरह से चंचल मन, चित्त और बुद्धि को बांधना भी दुष्कर है।

※ ※ ※

प्रत्येक व्यक्ति की बुद्धि स्थिर है, चित्त स्थिर है और मन स्थिर है। अगर न होता तो आज हम सब पागलखाने में होते। लेकिन अपने आपको, इस तत्व को जानने के लिये हमारे पास समय नहीं है। न हमारे माता-पिता और न पूर्वज उस ओर हमारा ध्यान आकर्षित करके बाल्यकाल से इसकी शिक्षा दीक्षा देते हैं। हमारी शिक्षा दीक्षा केवल उप-जीविका के लिये है। जीविका को हमने छोड़ दिया और उप-जीविका के पीछे फिर रहे हैं यही भोग है।

हम जन्म से बहिर्मुखी हैं। भीतर का हमें कोई ज्ञान नहीं है और न बाहर का भी। एक सेकण्ड आगे क्या होगा ये नहीं जानते तो भीतर तो बहुत दूर है। यही अविद्या है, अस्मिता है। इसीलिये हम भगवान पे आरोप करते रहते हैं कि उसने हमारे साथ ऐसा किया, वैसा किया। यदि ये ईश्वर, भगवान करवाता है तो ये भेद क्यों ? **Partiality** क्यों ? भगवान तो समदर्शी है। वो सबमें समान है। अज है सर्व व्यापक है। सर्वत्र है। सर्व शक्तिमान है। ये ही परस्पर विरोधी बातें हैं। वो जड़ नहीं, चेतन है, और क्या, अपरिणामी है।

***

इस सृष्टि में कुछ ऐसे विभाग हैं जैसे देवलोक, त्रयक लोक और मृत्यु लोक। ये विभिन्न प्रकार की रचना हमारे सामने हैं। देवलोक वासी ब्रह्म लोक, प्रजापति लोक, इन्द्र लोक और पितृ लोक-ये देवशक्ति सम्पन्न हैं। ईश्वर को कुछ करना नहीं पड़ता, जो जैसा चाहता है, होता रहता है। राम, कृष्ण आदि जो है सब इसी में हैं। त्रयक लोक में आते हैं-पैर पर चलने वाले प्राणी पशु पक्षी तथा लता आदि। ये अपनी रक्षा नहीं कर सकते। अपने आपको नहीं बचा सकते। जिनमें ज्ञान हैं, सम्पूर्ण शक्ति हैं, सभी कुछ कर सकते हैं लेकिन उऽऽहं- अपने में मस्त हैं। मृत्यु लोक में मानव प्राणी है इसमें विशेष बात हैं। जो सर्वज्ञ है उसका अंश, वो ज्ञान का अंश हमारे में है।

***

ऐसा माना जाता है कि थोड़ा-सा अभ्यास कर लिया, शक्ति-वक्ति मिल गई मुक्त हो गये, सिद्ध हो गये। नहीं....नहीं...., अभी आप भ्रांति में हैं। नाना प्रकार की दिक्कतें हैं। अहं प्रभाव डालता है लोगों पर। प्रभाव से बचकर अपना कार्य करना है।

***

निर्बीज समाधि की स्थिति में जब साधक पहुंचता है, तब विषय का जानकार न होने के कारण डाक्टर कहता है मर गया। वह जो साधक सुषुप्ता अवस्था में है, मर गया है। लेकिन वस्तुतः वह मरता नहीं है। सिद्धावस्था में साधक की जब यह स्थिति हो जाय तो २४, ३६ घटे रुकना चाहिये। जब तक बाडी फूलने व अकडने न लगे तब तक उसे मृत्यु नहीं समझना चाहिये। २४ से ३६ घंटे बाद ही उसकी अंतिम क्रिया करनी चाहिये।

सत्गुरू महिमा अनत है

(शिष्यानुभव)

हमारे अनुभव ही गुरुजी के लिये वास्तवित भेंट हैं

जब जब शिष्यगण, दीक्षित गण अपना अनुभव गुरुजी को बतलाते हैं, उस समय गुरुजी जो आशीष देते हैं, गुरुजी को जो खुशी होती है उसका वर्णन सहज में नहीं किया जा सकता, शब्दों में नहीं किया जा सकता। गुरुजी अपने लगाये पेड़ों के फल देखते हैं, जिस समय हम अपने अनुभव उनके चरणों में सुनाते हैं। अत: क्यों न बड़े विश्वास के साथ हम संकल्प लेकर जायं कि एक साल बाद आने वाले इसी दिन पर हम गुरुजी के बताए हुये मार्ग से साधना करते हुए कम से कम एक अनुभव प्राप्त करके अनके चरणों में उसे भेंट करेंगे।

हमारे गुरुदेव का जो दीक्षित परिवार है उसके अन्दर विभिन्न दर्शनों को मानने वाले लोगों का समावेश है तथा गुरुजी के प्रति उन सबका समर्पण भाव है। ये उपलब्धि सहज भले ही लगती हो परन्तु यदि हम विचार करें तो यह एक दुर्लभ उपलब्धि है। आज जैन दर्शन के लोग, वैष्णव दर्शन के लोग, मुस्लिम संप्रदाय के लोग, ईसाई एवं पारसी संप्रदाय के लोग एक मंच पर, एक गुरु के चरण छूते हुए, एक चरणस्पर्श में अपने आत्म कल्याण की ओर अग्रसर हो रहे हैं। ये बात कम नहीं है। जो भी इन चरणों में समर्पित भाव से आया वो आत्म कल्याण के लिये कुछ कर गया या करता रहेगा। गुरुजी अक्सर कहते हैं, तुम बीज तो ले लो। इस योग मार्ग से साधना करके जिन गुण स्थानों को तुम पहुच जावोगे, जो उपलब्धियां प्राप्त कर लोगे, वे उपलब्धियां आने वाले भव में भी सहायक होंगी। तथा अनुकूल परिस्थिति मिलने पर था समय आने पर यह बंधी हुई पूंजी उसी मापदण्ड से आपको आगे ले जाने में समर्थ होगी। गुरुजी हमेशा कहते हैं कि तुमने बीज तो डलवा लिया है, अब कुछ साधना कर लोगे तो वो तुम्हारी स्थायी पूंजी हो जायगी। इस मार्ग पर गुरुजी ने हमें प्रशस्त कर दिया है। अपनी साधना के अन्तर्गत हम जिस Speed से चलें, जैसे चलें, यदि लक्ष्य हमारे सामने है तो हम अपने लक्ष्य को अवश्य पालेंगे। यह बात अवश्य है कि साधना में समय की, समर्पण भाव की, साधना के तरीके की, उनके अनुभवों की व गुण स्थानों पर पहुंचने की परम्परायें निजी हो जाती हैं और उसमें लोग आगे पीछे रहते हैं; परन्तु जिस stage में गुरुजी हमको भेज रहे हैं उसमें आत्म कल्याण निश्चित है। आप हर तर्क छोड़कर उस मार्ग पर प्रशस्त तो होइये, आपकी साधना से प्राप्त अनुभव आपको ये विश्वास दिला देंगे कि हम जिस track पर जा रहे हैं वह सही एवं आत्म कल्याण का एकमेव ट्रैक है और सरल भी है। कुछ आचार्य कहते हैं कि यह मार्ग ग्रहस्थ के लिये अनुकूल नहीं है किन्तु मुझे ऐसा कुछ नहीं लगा। इस परिवार से सम्बन्धित अन्य लोगों को भी, मेरे ख्याल से ऐसा नहीं लगा होगा। ये मार्ग न तो इतना कठिन लगा और न ही ऐसा लगा कि गृहस्थी में रहते हुए हम कुछ अर्जन नहीं कर सकते।

परन्तु ये हुआ किससे ? सिर्फ गुरुजी के

भेंट है

भी सहायक होंगी।
पर था समय आने
मापदण्ड से आपको
गुरुजी हमेशा कहते
लिया है, अब कुछ
ारी स्थायी पूंजी हो
ने हमें प्रशस्त कर
अन्तर्गत हम जिस
यदि लक्ष्य हमारे
को अवश्य पालेंगे।
में समय की, सम-
की, उनके अनुभवों
की परम्परायें निजी
आगे पीछे रहते हैं;
हमको भेज रहे हैं
है। आप हर तर्क
तो होइये, आपकी
को ये विश्वास दिला
जा रहे हैं वह सही
ट्रैक है और सरल
कि यह मार्ग ग्रहस्थ
मुझे ऐसा कुछ नहीं
धित अन्य लोगों को
लगा होगा। ये मार्ग
र न ही ऐसा लगा
कुछ अर्जन नहीं कर

? सिर्फ गुरुजी के

समर्पण भाव रखने से एवं गुरुजी की निश्रा से। गुरुजी ने तो स्वय अपने मन्त्र में कहा है कि आप आराधना में बैठो, मैं बोलता हूं साथ रहने के लिए, सूझबूझ देने के लिए। आप बिश्वास रखिये, अटूट समर्पण है तो गुरुजी आपके पास हमेशा हैं। और अब हमारे पास हैं तो हमारे आत्म कल्याण के रास्ते में, अनुभव लेने के रास्ते में कोई शक्ति रुकावट बनकर खड़ी नहीं हो सकती। गुरुजी ने हमेशा कहा है कि आप एक ऐसी स्थिति का निर्माण कर लो यहां पुन्य व पाप कर्म दोनों का अर्जन न हो क्योंकि पुन्य कर्म भी आपको भोगने हैं तथा पाप कर्म भी आपको ही भोगने हैं। इस भोग की प्रक्रिया के कारण अनादि काल से हम प्रकृति के साथ जुड़े हुए हैं और अनादि काल से भोगते हुये चले आ रहे हैं।

परन्तु गुरुजी कहते हैं कि एक रास्ता है जिस पर यदि आप आगे बढ़ेंगे तो एक निर्जरा के स्तर पर पहुंच जायेंगे जहा कर्मों की सिर्फ निर्जरा होगी। कर्म बंधित नहीं करेंगे। कर्म जब बांधेंगे नहीं तो भोग का प्रश्न ही पैदा नहीं होता। सिर्फ निर्जरा ही होती जाती है। अतः गुरुजी के बताये मार्ग पर हमें विश्वास के साथ आगे बढ़ना है। सफलता हमें अवश्य मिलेगी और यह एक बड़ी उपलब्धि होगी कि कर्मों की निर्जरा के स्तर तक हम पहुंच जांय। मुझे इस बात का गर्व है कि इस परिवार के कुछ सदस्य इस बिन्दु तक पहुंच चुके हैं या इसके आसपास हैं। इस बात से परिवार के अन्य सदस्यगणों को भी बल मिलना चाहिए, विश्वास मिलना चाहिए कि जब ऐसा है, हमारे परिवार के कुछ लोग इस स्थिति में पहुंचे हैं तो हम कैसे नहीं पहुंच सकते? गुरु चरणों में, गुरुजी के लिये तो हम सब बराबर हैं। न कोई छोटा है न बड़ा है। साधना हमारा निजी कार्य क्षेत्र है। यदि हम उस पर आगे बढ़ें तो गुरु – कृपा हम सबको एक सी ही मिलती है। गुरुजी द्वारा प्रशस्त किये गये इस मार्ग पर आगे बढ़ने के लिए आत्म-ज्ञान अत्यन्त आवश्यक है। अतः जब भी समय मिले, गुरुजी का सानिध्य मिले इस विषय पर जानकारी हासिल करते रहना चाहिए। गुरुजी स्वयं भी कहते हैं कि आत्मज्ञान की आवश्यकता हमारे आत्म कल्याण के लिए अति आवश्यक है। हमारे छोटे से परिवार में हर दर्शन हर संप्रदाय के लोग गुरुजी द्वारा बताये आत्म कल्याण के मार्ग पर चल समान रूप से अकाट्य व अनुकरणीय अनुभव प्राप्त कर रहे हैं। और जब कुछ लोग ऐसी स्थिति प्राप्त कर सकते हैं तो क्यों न हम सभी यह संकल्प लें कि हम भी इस मार्ग पर दृढ़ता वा विश्वास से चलकर स्वयं अनुभव प्राप्त करके उसे सतगुरु के चरणों में अर्पित करेंगे।

शांतिलाल लूनिया
23-7-94

✻ सब कुछ शाँत हो गया ✻

गुरु पूर्णिमा के अवसर पर 6.7.82 को मैं बंगलोर से वर्धा पहुंची थी। वहीं मैंने गुरु दीक्षा ली। इसके बाद वापस घर आकर मैंने नियमित अभ्यास प्रारम्भ किया। कुछ दिनों के बाद एक दोपहर में विश्राम कर रही थी। अचानक मुझे दहाड़ने की आवाज़ आई व सिर में करेंट सा प्रवाहित होता महसूस हुआ। भृकुटियों के मध्य मुझे नीले रंग का गोलाकार प्रकाश दिखाई दिया। गोले का मध्य भाग कुछ दबा हुआ था, जहां से लहरें उठती हुई प्रतीत हो रही थीं। आवाज तथा संवेदना की तीव्रता उत्तरोत्तर बढ़ती जा रही थी, जिससे मुझे ऐसा लगा मानो सिर फट पड़ेगा। पहले तो इससे घबराकर मैंने आंखें खोल दी पर तुरन्त पुनः यह सोचकर बन्द कर ली कि देखें, आखिर होता क्या है। नीला वलय व सनसनाहट वैसी ही सनी रही। मैंने पूज्य गुरूजी का स्मरण किया। फौरन, वलय के मध्य, पूज्य गुरूजी की मुखाकृति उभर आई। मैंने स्वयं को उस ओर दौड़कर जाते हुए देखा। पूज्य गुरूजी ने दोनों हाथ मेरी ओर बढ़ा दिए। इसके बाद नीले रंग की जगह सुनहरा हरा रंग उस गोल आकृति में दिखाई देने लगा। इसका भी स्थान वहीं, भृकुटियों के मध्य में ही था। यह एक बार कुछ क्षणों के लिये अदृश्य हो, पुनः स्थापित हुआ और अन्त में सब कुछ शांत हो गया।

श्रीमती शारदा राव

C/o Dr. M S. Neelkanth Rao, Anupama No. 4,11th Main Road, 4th Block East, Jaynagar, Banglore - 560011

★ ★ ★

✻ कांटा चुभ गया ✻

पिछली रात्रि प. पू. गुरूजी की आशीष से एक अनुभव हुआ। चरणों में लिख रहा हूं। एक जंगल में एक सघन वृक्ष के नीचे एक चबूतरे के ऊपर गुरूजी विराजमान हैं, पास में केवल आ० श्री अशोकजी बैठे हैं। मैं गुरुजी के दर्शन हेतु पैदल जंगल में जा रहा हूं। एक पैर में मेरे कांटा चुभ गया। मैं लंगड़ाते लंगड़ाते गुरूजी के पास पहुंचा। उनकी पूजा किया। उन्होने आशीष दी, फिर कहा – बहू को साथ नहीं लाये मैंने उत्तर दिया नहीं। गुरूजी ने आदेश दिया – बहु को साथ ले आओ। शीघ्र आना, सुबह तक मैं यहा रहूंगा। मेरी आंख खुली, घड़ी देखा रात्रि का एक बजा था। उनकी आशीष से सब आनन्द है।

दिनांक 01.08.1994

प्रकाशचन्द पारेख
सदरबाजार
मुंगेली – 495334
जिला–बिलासपुर (म. प्र.)

ई

र बन्द कर ली कि
ोला वलय व सन–
ने पूज्य गुरूजी का
; मध्य, पूज्य गुरूजी
स्वयं को उस ओर
ज्य गुरूजी ने दोनों
इसके बाद नीले रंग
इस गोल आकृति में
स्थान वहीं, भृकु–
एक बार कुछ क्षणों
पित हुआ और अन्त

ारदा राव
ama No. 4,11th Main
nglore - 560011

ा, सुबह तक मैं यहा
घड़ी देखा रात्रि का
ष से सब आनन्द है।

प्रकाशचन्द पारेख
सदरबाजार
मुंगेली – 495334
–बिलासपुर (म. प्र.)

....मैं तो बस अपने आपको जानना चाहती हूं....

गुरूजी जो अनुभव – अनुभूतियां है सब आपकी अपार कृपा है। जिसका पार पाना मेरे लिये सम्भव नहीं है लेकिन जो देखा है आपको लिख रही हू। यही मेरा सौभाग्य है।

25–12–92 को मध्यरात्रि में मुझे मरने के समान अनुभूति हुई। मूझे तीव्र बेचैनी एवं छटपटाहट होने लगी और मेरे अन्दर कोई काली-सी हाथ के सदृश्य वस्तु जो शरीर के अन्दर प्रवेश होकर मुझे पकड़ने का प्रयास कर रही है और मैं उसके आगे आगे अपने ही शरीर के अन्दर इधर उधर सम्पूर्ण शरीर परिक्रमा करते हुए असहाय रुप से दौड़ रही हू कि मुझे कोई बचा ले। उस समय मैं अपने शरीर के अन्दर की पीड़ा का वर्णन नहीं कर सकती जो विचित्र एवं असहनीय दर्द हुआ और अन्दर से आवाज आई–मर गई। इतने में मुझे भृकुटी मध्य कुछ सक्रिय वस्तु का बोध हुआ और जोर से पुकारा – "गुरूजी"। मेरे गुरूजी पुकारते ही उसने तुरन्त छोड़ दिया जैसे किसी ने पटक दिया हो। पता नहीं, कितनी देर बाद सामान्य होने पर मैंने पाया कि पूरा शरीर शून्य, हिलता नहीं, बर्फ के समान ठण्डा। मुख से लार के समान पदार्थ निकल रहा था जिससे आस्तीन एकदम भीग गये थे। शरीर में तेज कम्पन हो रही थी। "गुरूजी" मैं तो आपके शरण हूं मुझे काहें का डर।

3.3.93 ओम् की ध्वनि के साथ, शंख घण्टा की ध्वनि के साथ एक बड़ा घूमता हुआ गोला और गुरूजी के दर्शन।

17.3.93–गुरूजी के मंत्र का जाप करते हुए लेटी तो मुझे गुरुजी के साक्षात् दर्शन हुए। मुझे श्री गणेशजी, दुर्गा, राधा, कृष्ण, सत्यसाई बाबा अनगिनत शिवलिंग और फुंकारते सर्प तो अक्सर दिखाई देते हैं। एक वार तो ध्यान में मैंने अपनी छबि देखी।

7, 8, 9. 10.93-मुझे एक ऐसा विशालकाय समुंद्र जिसका जल काला एवं स्याही के रंग के समान था लगातार तीन दिन तक देखा अचानक वो बदलकर सम्पूर्ण दिव्य प्रकाश मय हो गया। मेरे पूरे शरीर को हिला दिया।

4.3.94 – ये अनुभव भी विचित्र है। मैंने देखा तेजवानी अंकल मेरे पेट पर ऊपर बाईं ओर से चलते हुए हृदय स्थल तक पहुंचे। मैंने बेचैनी के साथ अंकल की स्पष्ट छबि होशोहवास में देखी है। वो जिस मार्ग पर चल कर आ रहे हैं वो मेरा शरीर है। इसका भान होते ही घबराहट होने लगी तभी घर के लोगों ने आवाज लगाई कि अलका, अंकल आये हैं। मैं अवाक रह गई कि सच में अंकल घर में आ गये।

19.8.94

10.7.94 आज मैंने एक सुन्दर कमल जो प्रकाश से युक्त था उसका प्रकाश सर्वत्र फैलते हुए दिखाई दे रहा था ।

15.7.94 आज ध्यान के बाद जब मैं आंख बंद किए बिस्तर पर बैठी तो मुझे सूर्य एवं अर्द्ध चन्द्रमा जो धीरे धीरे पूर्ण बड़ा होता गया, दिखाई दिया ।

निद्रावस्था में मैं अभ्यास करती हूं तो विशेष प्रकार से सांस लेने पर रीढ़ की हड्डी में प्रकाश सरसराते हुए चढ़ने लगता है और दिन के अभ्यास में वैसा नहीं होता । जितना भी है सब गुरुजी की अपार कृपा का ही परिणाम है। मैं तो बस अपने आपको जानना चाहती हूं ।

– कु. अलका मिश्रा
रायपुर

★★

※ प्रतिदिन का अनुभव ※

23.07 94

प्रतिदिन प्रात:काल में, जाग्रत अवस्था में एवं सारे कार्य करते हुए खुली आंखों से ऐसा अनुभव में आ रहा है । खिड़की में से सर सर की ध्वनि होने के साथ, मैना की जोर जोर से चिल्लाने की आवाज आती है तथा ऐसा दिखाई देता है कि खिड़की में से अजगर जैसा मोटा सर्प घर में आता है एवं धीरे धीरे मेरे नजदीक आ जाता है। फिर फन फैलाकर मेरे सिर के ऊपर आराम से बैठ जाता है । सर्प काले रंग व सफेद रंग का होता है तथा फिर कहीं नहीं जाता है । यह अनुभव होने के बाद मेरा मंजन करने का कार्य पूरा होता है । मंजन करने के बाद गुरुजी को प्रणाम करनें जाती हूं एवं श्रीमद् भागवत गीता के कुछ पृष्ठों को पढ़ती हूं । गुरुजी के पास जाते ही महावीर स्वामीजी के दर्शन होते हैं । उनकी आंखें चमकती रहती हैं वे भी गुरुजी के साथ दिखते हैं तथा मार्गदर्शन देते हैं । गुरुजी भी मार्गदर्शन प्रदान करते हैं । सर्प तो दिन से रात तक जब कभी मर्जी हो आ जाता है । ऐसा प्रतिदिन अनुभव में आता है ।

– कु. कीर्ति राठौर
एच/३२, टीचर क्वार्टर
कन्या शिक्षा परिसार, कुक्षी,
धार (म. प्र.) 454331

※ अब तुम परम हंस हो गये हो ※

09.03.95

यह कितना विचित्र संयोग है कि कुछ दिनों से मैं गुरुजी की याद कर रहा था। मुझे गुरुजी के दर्शन करने के पश्चात कई वर्ष बीत गये हैं। मैंने गुरुजी के दर्शन का लाभ इन्दौर में ही उठाया था। यह मेरा सौभाग्य है कि गुरुजी मेरे घर पधारे थे तथा मैंने उनका डेन्चर (Denture) बनाया था। तत्पश्चात् उन्होंने मुझे आशीर्वाद दिया था तथा एक पुस्तक भेंट की थी।

इसके बाद वर्षों बीतते गये। अभी कुछ समय पहले से मुझे ऐसी आत्मप्रेरणा अपने आप हुई तथा गुरुजी की याद आई किन्तु मुझे कुछ नहीं मालूम था कि गुरुजी आजकल कहां है। मैंने उनकी पुस्तक को पूरा पढ़ा तथा ज्ञात हुआ कि यदि मैं सच्चे दिल से याद करूं तो गुरुजी अवश्य दर्शन देते हैं अतः मैंने उनका कई बार (सुबह, दोपहर तथा शाम) ध्यान भी किया। श्री राठौड़ साहब का भी ध्यान किया तथा उन्हें याद किया। चूंकि मेरे व उनके काफी पुराने सम्बन्ध है फिर भी उनसे कई महिनों से मुलाकात नहीं हो पाई थी। उन्होने मकान भी बदल लिया है अतः उन्हें भी ढूंढ़ने का सोचा था।

कुछ दिन पहले मुझे ध्यान आदि से प्रेरणा मिली। मैंने गुरुजी पुस्तक से पूरी विधि पढ़ी किन्तु सैद्धान्तिक एव व्यवहारिक ज्ञान में काफी अन्तर होता है अतः पूर्णरूपेण न सही आंशिक रूप से ही मैं आंख बन्द कर जैसे सभी देवी देवताओं का ध्यान करते हैं, मैं भी करने लगा। पहले मुझे अन्धेरा दिखता था बाद में वही अंधेरा उजाले में परिवर्तित होने लगा, कभी लाल, कभी पीला दिखाई देने लगा।

इसके बाद मुझे ध्यान में ही ईश्वर के दर्शन होने लगे जैसे श्री सांई बाबा, श्री रामचंद्रजी, श्री हनुमानजी महराज, श्री गणेशजी, देवियां, भगवान शंकर जी, भगवान कृष्ण, विष्णु इत्यादि के दर्शन होने लगा। धार्मिक स्थलों तथा ध्यान स्थलों पर भी सिर्फ आंख बंद कर ध्यान करने से ही दर्शन लाभ होने लगते हैं। ये अजीब से अनुभव थे। मुझे आनन्द आता था किन्तु मैं चाहता था कि मुझे इसका अधिक से अधिक अनुभव हो परन्तु एक गृहस्थ का अधिक समय निकालना अत्यन्त कठिन होता है इसलिये आंशिक रूप से ही जब समय मिलता इसका आनन्द लेता था। यहां तक रात को सोते समय भी जब आंख बंद करता मुझे वही सब अनुभव होता। कभी कभी गोल सफेद चमक भी दिखाई देती है।

मैंने गुरुजी की पुस्तक में कुंडलिनी के बारे में भी पढ़ा था। उसके बाद मन में इच्छा हुई कि कुंडलिनी का अनुभव कैसा होता है। तत्पश्चात् ध्यान में मुझे भी कुछ उसी प्रकार का अनुभव हुआ तथा ऐसा लगा जैसे कुछ कम्पन सर्पिली आकार का हिलता डुलता ऊपर की ओर

जा रहा है। धीरे धीरे वह ऊपर बढ़ता हुआ मस्तिष्क तक गया उसके पश्चात मन में ऐसी आवाज आई कि "अब तुम परमहंस" हो गये हो तो मन अत्यन्त प्रसन्नता से भर गया। उसके बाद कई दिन तक ऐसा लगता रहा। जैसे अपार प्रसन्नता भर गई हो, खूब हंसने के लिऐ मन करता रहा इसके बाद मेरे ध्यान में ईश्वर की प्रतिमायें दिखना कम हो गई। अभी भी कभी कभी खूब हंसने एवं प्रसन्न रहने का मन होता रहता है। अब कभी कभी ऐसा अनुभव सा होता है कि जैसे पृथ्वी पर जीव बच्चों के समान है। किसी का कुछ भी नुकसान न होने पाये। अत: जितनी सहायता कर सकता हू, करने की कोशिश करता हूं।

पिछले दो वर्षो से अनुभाव करता हूं कि जिस काम की मैं इच्छा करता हूं वह स्वयंमेव हो जाता है। मैं गुरुजी से सम्पर्क करने की कोशिश में था कि अचानक श्री राठौड़ सा. का मेरे घर आगमन हो गया तथा गुरुजी से सम्पर्क करने का साधन प्राप्त हो गया। अब गुरूजी के दर्शनों की कामना है।

यूं तो ऐसे कई अनुभव है जिनमें दैवीय चमत्कार का अनुभव करता हू। कई बार ऐसा भी अनुभव हुआ है कि जब कभी अच्छा कार्य करने के लिये कोशिश की है तो व्यवधान आये हैं मेरे स्वयं के कार्यो में भी अक्सर अड़चन आती रहती है परन्तु धीरे धीरे सभी बाधायें अपने आप ही दूर होती चली जाती हैं। गुरुजी स्वयं अंतर्यामी है मेरे बारे में सब जानते हैं। उनके दर्शन एवं मार्गदर्शन की कामना है.

डा. वाय. एम. सक्सेना
16/3 के. ई. एच. कम्पाउन्ड
एम. वाय. अस्पताल रोड,
इन्दौर – 452001

❋ ❋ ❋

गुरूकृपा से यात्रा निर्विघ्न सम्पन्न हो

पेन्ड्रा - 24.03.95

21 तारीख को सुबह 6.30 बजे मुंगेली आश्रम गुरूजी के पास पहुंचा। प. पू. गरूजी विश्राम कर रहे थे उन्हें णमोस्तु करके अन्दर से आज्ञा पाकर मैं माधवपुरी गोस्वामी जो मेरे कालेज के समय के मित्र थे, उनके निवास स्थान पर गया। मजन व स्नानदि से निवृत्त हो उनके यहां साधना कक्ष में गुरुजी का ध्यान किया। उसके पश्चात् हम और माधव बैठक में बैठे थे कि अचानक एक जोरदार धमाका हुआ। बाहर निकलकर देखा, मैंने कहा – अन्दर कुछ हुआ। उनकी बड़ी बच्ची अलका थी, मां घर पर नहीं थी। वह गैस चूल्हा में कुकर रखकर नीचे बैठकर नाश्ता कर रही थी। उसी समय यह घटना घटी। कुकर का ढक्कन टेढ़ा-मेढ़ा होकर दूर पड़ा

. का मेरे घर
म्पर्क करने का
। के दर्शनों की

जिनमें दैवीय
कई बार ऐसा
। अच्छा कार्य
व्यवधान आये
: अड़चन आती
ग्रायें अपने आप
जी स्वयं अंत-
। उनके दर्शन

एन. सक्सेना
एच. कम्पाउन्ड
अस्पताल रोड,
र – 452001

ज हो

- 24.03.95

क में बैठे थे कि
हुआ। बाहर
दर कुछ हुआ।
मां घर पर नहीं
कर नीचे बैठ-
समय यह घटना
होकर दूर पड़ा

था, लेन्टर्न पर दाल के छीटे थे। मेरे अन्तर्मन में यह भाव स्वमेव उत्पन्न हुए कि सद्गुरू कृपा से एक होनी कितनी साधारण घटना के माध्यम से कट गई।

मैं अवाक् सद्गुरू चरणों का स्मरण करते हुए दस मिनट बैठा रह गया। वहां से सीधे सद्-गुरूजी के पास गया। आश्रम पहुंचने पर मैं गुरू-जी को प्रणाम करके बैठ गया। गुरूजी के पूछने पर मैंने अपना नाम बताया। फिर पूछे – काम हो गया। मैंने कहा – जी गुरूजी। पुन: गुरूजी ने पूछा– काम हो गया। मैंने कहा– जी गुरूजी। गुरूजी ने डांटकर कहा– फिर तो आपसे कुछ नहीं कहूंगा, न कुछ पूछूंगा।

मैं बात समझा नहीं, आत्मग्लानि का अनुभव करते हुए अशोक भैया के पास गया और उन्हें सारी घटना का विवरण बताया। अशोक भैया ने कहा– आपसे गुरूजी दो बार पूछ चुके हैं इसलिये जाकर पूरी बात बताइये। मैं पुन: गुरूजी के पास गया और सारी बात बताई। गुरूजी ने कहा – हां, बच गया। आपको सब बतलाना चाहिए था। ठीक है, काम हो गया। सद्गुरु कृपा से बच्चों ने व्यापार में रूची लेना प्रारम्भ कर दिया है। मैं नित्यप्रति आत्मिक प्रगति के साथ साथ आर्थिक रूप से स्वावलम्बी बनता जा रहा हूं। गुरूकृपा से आनन्दित हूं। गुरू स्मरण ही मेरे जीवन का अन्तिम ध्येय है। उनका स्मरण करते हुए इस संसार से प्रस्थान करू इसी कामना के साथ सद्गुरू चरणरत। गुरू आदेशित अनुभूतियां :-

1. मैं फरवरी, 95 दिन शनिवार दोपहर एक बजे मोटर सायकल से बाजार जा रहा था। मेरे साथ विश्वनाथ सेवक था। मोटर सायकल से जाते हुए रास्ते में ट्रक से साइड लेकर जैसे ही सड़क पर आया अचानक एक गाय बड़ी तेजी से दौड़ती हुई मेरी ओर आई। बड़ी जोरदार टक्कर हुई। मैं कैसे सम्भलकर पुन: सीधे मोटर सायकल चलाते हुये बचा, यह परमात्मा स्वरूप सद्गुरू ही जाने। इतना जरूर आभास हुआ, अन्तर्मन से आवाज आई – सम्भलकर चलो। मैं गुरूकृपा से पूर्ण सुरक्षित बच गया। सारी घटनाओं का पूर्वाभास हो जाता है। सदैव गुरूजी साथ है। यह बात त्रैकालिक सत्य है। गुरूजी के सिवा मेरा इस जगत में कोई नहीं है। उनका आशीर्वाद ही मेरी जीवन नौका पार लगाएगा। आगे की यात्रा भी गुरूकृपा से निर्विघ्न सम्पन्न होगी यह पूर्ण विश्वास व आस्था गुरू चरणों में बनी रहे यही प्रार्थना सदेव करता हुआ– "होहु भव भव भक्ति तुम्हारी वर मोहि यह दीजिए। कर जोर विनवै दास वीरा, यह कृपा अब कीजिये।।"

2. 5 मार्च, 95 रात्रि दो बजे के आसपास एक अद्भुत अनुभव हुआ-मैं मोटर सायकल चला रहा हूं। मेरे पीछे मित्र पण्डित कृष्णदत्त बैठे हैं। चलते चलते हम एक ऐसी जगह पहुंचते हैं जहां चारों ओर जल राशि ही दिखाई देती है। मैं मोटर चलाते हुये चला जा रहा हूं। मैं बीच में कैसे पहुंच गया, मालूम नहीं पड़ा लेकिन एक अदृश्य शक्ति मुझे वहां पर ले जाती है। बीचों बीच पृथ्वी का उतना हिस्सा ऊपर आता है जिस पर आसानी से मोटर सायकल जा सकें। चारों

ओर जल राशि है। बड़ा आनन्द आ रहा है। मुझे संसार की असारता का स्पष्ट-अनुभव होता है। जैसे पूरा विश्व ही जलमग्न हो रहा है। यह एक शाश्वत सत्य है कि मैं गुरूकृपा से सुरक्षित महसूस कर रहा हूं। गुरूकृपा ही इहलोक परलोक से पार उतार सकती है। आनन्दित हूं, आनन्दपूर्ण यात्रा की आकांक्षा है। मुझे आगे का रास्ता भी उस जलराशि में स्पष्ट नजर आ रहा है। मैं अपने मित्र से कहता हूं- मैं इस पार से उस पार जा सकता हूं। विभिन्न प्रकार के देवी देवताओं के दर्शनों का लाभ भी मिलता है। यह स्थिति सुबह चार बजे तक रही। परमपूज्यनीय सद्गुरु वासुदेव की छत्रछाया में आगे भी यात्रा इसी प्रकार चलती रहे इन्हीं भावों के साथ सद्गुरु युगल चरणों में शत् शत् नमन।

वीरचन्द जैन
पेन्ड्रा, जिला बिलासपुर

***

गुरूजी की सेवा सतत् करना है

मुंगेली
दिनांक 7.4.95

जो व्यक्ति दो नाव में पैर रखता है उसे शायद किनारा कभी नहीं मिल पाता। सन् 1980 में मैं श्री परमपूज्य सद्गुरुजी के चरणों में पहुंचा। उस समय श्री गुरुजी डा. भानूजी के निवास में रुके थे। उनका प्रवचन सुना और 2/4 दिन बाद मेरे अनुरोध पर श्री गुरुजी ने मुझे दीक्षा प्रदान की।

मेरा प्रारम्भ से प्रयास था कि गुरुजी की सेवा सतत् करना है। आज करीब हो गया, हमारे जीवन में, हमारे परिवार में बहुत उतार चढ़ाव आये मगर मैं गुरुजी के लिये और श्री गुरुजी मेरे लिये वैसे ही हैं जो पहले थे, अब श्री गुरुजी के आदेश से मैं और मेरी पत्नी ध्यान करना बन्द कर दिये हैं। श्री पूज्यनीय सद्गुरुजी के आशीष से मुझे समाधी की स्थिति प्राप्त हुई। मेरी कुण्डलीन भी श्री परम पूज्यनीय सद्गुरुजी के आशीष से जागृत हुई।

मैं करीब साल डेढ़ वर्ष पूर्व 3-4 वर्ष तक बीमार था, मगर श्री गुरुजी मुझे बचा लिये। उन्होंने मुझे नया जीवन दिया। मैं तो यह कहूंगा श्री गुरुजी के समान योगी विश्व में कहीं नहीं है। श्री सद्गुरुजी के कार्य को मैं अपना पहला कार्य समझता हूं।

श्री पू. गुरुजी के आशीष से मैं गुरुजी एवं आश्रम का सचिव बना हूं। मेरी परिवार दीक्षित है। अभी भी मुझे कई बार खुले या बन्द आंखों में कई प्रकाश दिखता है। कुछ माह पूर्व

मैं और मेरी धर्मपत्नी ससुराल वालों के साथ नागपुर के आगे भद्रावती तीर्थ गये। रात्रि जब मैं तीर्थ परिसर में कमरे में आराम कर रहा था, निम्न अनुभूति हुई --

एक बहुत बड़े हाथी में श्री गुरूजी बैठे हैं और कमरे के सामने घूम रहे हैं। मैं मुंगेली आश्रम में श्री गुरूजी को अनुभव बताया। गुरूजी कहे--हाथी लक्ष्मी का वाहन है अच्छा अनुभव है। श्री गुरूजी के चरणों की सेवा करने का सौभाग्य मुझे एवं मेरे परिवार को सदा मिलता रहे। जन्म जन्मान्तर मिलता रहे।

प्रकाशचन्द पारख (जैन)

✻✻

✻ कहीं कोई चोर तो नहीं है ✻

मुंगेली 7.4.95

सन् 1980 में मैं और मेरे पतिदेव श्री प्रकाशचन्द जी पारेख श्री परम पूज्यनीय महा-योगी भगवान स्वरूप श्री सद्गुरूजी से दीक्षा मुंगेली में प्राप्त किये। हम दोनों श्री पू. सद्गुरू जी के आदेशानुसार ध्यान करते थे।

कुछ वर्ष पूर्व दीपावली के दिन मुझे एक अनुभूति हुई। मुझे असामान्य अनुभव होने लगा। मैं कमरे में पलंग में जाकर लेट गई। मेरे सिर में बार बार कोई हाथ फेरने लगे। मैं घबराई मुझे लगा कोई चोर है। मैं पलंग के नीचे देखी लाइट जलाकर। कोई नहीं। सिर में बार-बार स्पष्ट स्पर्श। मैं अपने पतिदेव को बतलाई। उन्होंने कहा-तुम और परिवार आज धन्य हो गया। पू. श्री सद्गुरूजी ही साक्षात् कमरे में आकर आशीर्वाद दिये हैं।

एक बार पू. श्री सद्गुरूजी का मुंगेली में सालाना प्रोग्राम था। बाहर से आये हुए गुरू भाई व गुरू बहिनो का सुबह का भोजन हमारे घर में था। रात्रि को मैं कमरे में लेटी थी। पानी जोरों से गिर रहा था, बिजली बन्द थी। छत में सूर्य चन्द्रमा की तरह प्रकाश दिख रहा था। मैं घबराई। ऐसा लग रहा था छत फट जायेगा। आंख बंद करूं या खोलूं तो भयंकर प्रकाश दिखे।

मेरे पतिदेव आश्रम के सचिव हैं। रात्रि १२ बजे उन्हें आद. डा. भानूजी अपनी जीप में आश्रम से छोड़ने आये। वे भी कमरे में छत में वही प्रकाश देखे। अब हम दोनों संयुक्त रूप से चकाचौंध करने वाला प्रकाश देखे। यह अनुभव श्री सद्गुरूजी को बताये। गुरूजी कई बार विनोद में पूछते हैं क्यों बहू कमरे में कैसे चोर आ गया था। गुरूजी कहे तुम्हारे एव परिवार का कल्याण हो गया।

घर का दरवाजा खुला रखा और मन्दिर वाले कमरे में (पूजा का कमरा) जहाँ सत्गुरु महराज की तस्वीर रखी हुई है वहां जाकर गुरुजी के सामने दो अगरबत्ती जलाकर विनती की कि महराज अब आपके हाथ में है- मारो या बचाओ।

यहां यह बताना भी जरुरी समझता हूं कि इस घटना के दिन तक मैं प. पू. गुरुजी से दीक्षा नहीं ले पाया था। मैंने गुरुजी को मानता आ रहा था। चूंकि मेरा भतीजा श्री धनराज वर्मा गुरुजी से दीक्षित था और उनसे ही गुरुजी के बारे में पता चला तो मैं भी गुरुजी को मानने लगा और गुरु-पर्व 94 मनाने जब मैं जुलाई में रायपुर गया तो उनकी फोटो लेकर आया और अगरबत्ती लगाना शुरु किया।

उस दिन भी अगरबत्ती जलाकर दो तीन मिनट तक खड़ा रहा फिर आकर बिस्तर पर सो गया। बस, मुझे कोई होश नहीं रहा। उस समय प्रात:काल के 3 या 3.30 बजे होंगे। सबेरे हर हर दिन की तरह 6 बजे उठा तो ऐसा अनुभव हुआ मानो रात में कोई सपना देखा हो। मैं पूरी तरह स्वस्थ था। मुझे किसी प्रकार की कोई तकलीफ नहीं थी। फिर सवेरे ही मैं भण्डारा चला गया।

सत्गुरु महराज सर्वव्यापी और समर्थ हैं उन्हें मेरा साष्टांग प्रणाम.

डा. एम. के. वर्मा
मु. पो. सौन्दड़
तह. - साकोली
जिला - भण्डारा (महा.)
पिन 441006

* * *

भण्डारा जाने के पूर्व उन्होंने अपनी लड़की को फोन किये कि चेक-अप के लिये उन्हें आकर ले जांय। उनकी लड़की श्रीमती निर्मला पंजवानी भण्डारा में रहती हैं। उन्हें जब पता चला तो वह अपने पति के साथ कार में सौंदड़ के लिये रवाना हुई। रास्ते में वह भगवान को बार बार विनती करती जा रही थी कि पिताजी स्वस्थ मिलें। अचानक उन्हें गुरुजी का स्मरण हो आया। घर में गुरुजी का फोटो रखी हैं लेकिन पूजा वगैरह नहीं करती। जैसे ही गुरुजी का स्मरण हो आया, तो बोलीं - यदि सच्चे गुरु हो तो मेरी विनती है कि मेरे पिताजी स्वस्थ मिलें। इतना कहना था कि उन्होंने देखा कि कार के आगे आगे गुरुजी चले जा रहे और हमारी कार पीछे पीछे। यह देखकर वह इतना भाव विभोर हो गई कि समझ नहीं पाई कि यह सब क्या हो रहा है। सौंन्दड़ पहुंचकर उन्हें पता चला कि उनके पिताजी स्वस्थ है और वे भण्डारा गये हुए हैं। तब से वे गुरुजी के दीक्षा लेने को बहुत उत्सुक है। यह घटना उन्होंने ही मुझे बताई थी।

धनराज वर्मा
रायपुर

मैं प्रतिदिन सुबह और शाम नियमित रुप से गुरुदेव से प्राप्त निर्देशानुसार 10 से 15 मिनट तक ध्यान करता हूं । इस अवधि में समय समय पर कुछ अनुभूतियां हुई हैं जिनका वर्णन निम्नानुसार है –

परम पूज्यनीय गुरुजी के पैरों के दोनों अंगूठों से जलते अनारदानों के समान तीव्र प्रकाश का स्फुरण होता है । वह परम शीतल होता है । उसमें उष्णता नाम मात्र को भी नहीं होती । उस प्रकाश से मेरा सम्पूर्ण शरीर नहा उठता है ।

कभी कभी गुरुदेव के पैरों के दोनों अंगूठों से शुद्ध पानी के फव्वारे ठीक उसी प्रकार फूटते हुए दिखाई देते हैं जैसे शंकर की जटाओं से गंगा । अंगूठों से निकले ये शीतल फव्वारे मेरे सिर पर गिरते हैं एवं मेरा सम्पूर्ण शरीर नहा उठता है ।

कभी कभी गुरुदेव के पैरों के दोनों अंगूठों पर दो काले रंग के नाग कुंडली मारे हुए बैठे दिखाई देते हैं । ये दोनों सर्प एकदम स्थिर एवं अचल होते हैं ।

अनेक अवसरों पर गुरुदेव के दोनों अंगूठों पर दिए की लौ के समान दो छोटे छोटे प्रकाश के पिण्ड दिखाई देते हैं जो कुछ ही देर में पर्वताकार हो जाते हैं एवं चारों ओर प्रकाश ही प्रकाश फैल जाता है ।

कई बार गुरुदेव राजकुमार राम के वेश में दर्शन देते हैं । अनेक बार वे मुझे रथारुढ़ राम के रुप में भी दिखाई देते हैं जिसमें वे स्वयं रथी एवं सारथी दोनों होते हैं । रथ, ध्वज, गुरुदेव एवं अश्व सबके सब चांदी के समान सफेद एवं उज्ज-वल होते हैं । राम वेश में गुरुदेव, रथ एवं अश्व दूर से तेजी के साथ मेरी ओर आते दिखाई देते हैं एवं पास आने पर ठहर जाते हैं ।

मुझे ऐसा लगता है जैसे चौबीसों घंटे गुरु देव मेरे पास हैं । मुझे ऐसा आभास होता है चौबीसों घंटे उनके सशक्त संरक्षण में मैं सुरक्षित हूं ।

4.5.95

(डॉ. आर. डी. दास)
प्राचार्य
सी–९, भगवती निवास
टैगोरनगर
रायपुर (म. प्र.)

* * *

श्री सत्गुरुवेः नमः

गुरुजी अनंत आकाश है ।

परम पूज्य श्री गुरूजी के चरणों में
सत् सत् नमन

मेरे पापा (श्री ईश्वरलाल देवांगन) ने सन् 1988 में दीक्षा ग्रहण की । वे जब भी श्री गुरूजी के दर्शन के लिये नयापारा से रायपुर जाते थे । मैं भी उनके साथ साथ जाता था । श्री गुरूजी' का व्यक्तित्व मुझे प्रथम दर्शन में ही असाधारण लगा । मैं जब भी "श्री गुरूजी" के चरणों में होता था मुझे लगता था कि मैं परम-पिता के श्री चरणों में बैठा हूं । तदुपरांत दिनांक 12 12.93 को हम सब (मम्मीजी, छोटा भाई चि. कलेश और बहन कु. विनीता) ने दीक्षा ग्रहण की । दीक्षित होने के पश्चात मेरी सभी मनोका-मनाएं पूण हुई ।

दिनांक 8.11.94 दिन मंगलवार रात्रि 9.45 का समय था । पापा और मम्मी दोनों गाड़ी में लगे विद्युत मोटर को ठीक कर रहे थे । टी. वी. में सांस्कृतिक पत्रिका का कार्यक्रम 'सुरभि' चल रहा था । हम तीनों भाई बहन ध्यान पूर्वक सुरभि देख रहे थे । मैं दीवाल से सटकर जमीन पर पालथी मारकर बैठा था और दोनों भाई बहन मुझसे तीन चार फीट दूर बायें तरफ बैठे थे । इतने में ही कहींसे 1½फीट लम्बा एकदम काला सर्प आया । चूंकि मैं पालथी मारकर बैठा था । मुझे पता ही नहीं चला कि कब सर्प मेरे बायें जाँघ पर बैठ गया है । यह बात मैं आज तक समझ नहीं पाया कि छोटे से छोटे कीड़े के हाथ पैर में रेगने पर तुरंत आभास हो जाता है । किन्तु इतने लम्बे सर्प के चढ़ने का मुझे जरा भी आभास नहीं हुआ । ये सब गुरूजी ही जाने थोड़ी ही देर में मुझे कुछ गुदगुदी सी महसुस हुई मैंने समझा कि कीड़ा वगैरह होगा । और जब मैंने अपने जांघ की तरफ देखा तो मेरे होश ही उड़ गये । मैंने सोच लिया कि मैं एकदम पत्थर के समान स्थिर हो जाऊं तभी मैं बच सकता हूं । मेरे मुंह से एक शब्द भी नहीं निकला । केवल इतना ही बोल पाया – विनीता ! सांप । जब दोनों भाई बहन ने ये शब्द सुने तो वे पहले तो मजाक समझे । किन्तु मेरे मुंह से निकले ये शब्द इतने भयपूर्ण थे कि जब उन लोगों ने मेरी तरफ देखा तो रोना शुरु कर दिया और मम्मी को जोर से पुकार कर कहा – मम्मी । सांप । ये शब्द सुन कर पापाजी दौड़ते हुए आये और दूर से ही हम सबको स्थिर देखकर सारी स्थिति समझ गए । तभी मुझे गुरूजी का स्मरण हो आया जो दीक्षा देते समय गुरूजी ने कहा था कि जब भी कोई मुसीबत में हो तो गुरूमन्त्र का स्मरण करना मुसीबत टल जायेगी । अत: मेरे मुंह से गुरूमन्त्र का उच्चारण होने लगा । मैंने तीन बार श्री गुरू मन्त्र का जाप किया । इतने समय में ही इसे पापाजी का पुत्र प्रेम ही कहिये कि जैसे ही उन्होंने मेरे जांघ में बैठे सर्प को देखा तो बिना डण्डा लिये ही पुत्र रक्षा हेतु सर्प को दूर फेंकने के लिए

खाली हाथ से जोर से सर्प को मारे। खैर हाथ से सर्प का स्पर्श नहीं हुआ। किन्तु हाथ की स्थिति और हाथ के हवा से सर्प फिसलकर जमीन पर गिर गया। हाथ से मारना ही एक निमित्त था। गुरूमन्त्र के उच्चारण से ही सर्प नीचे गिरा। सर्प के गिरते ही मैं तुरन्त वहां से उठकर भागा। घर के सदस्य इतने भयभीत थे कि तुरंत ही उन्होंने बिना सोचे समझे सर्प को मार दिया। अत: कुछ पण्डितों के कहने पर सर्प आत्मा की शांति के लिए पंचवी के दिन मैंने भगवान कुलेश्वर महादेव राजिम (त्रिवेणी संगम) में पूजा अर्चना की।

इस प्रकार गुरूजी ने मुझे एक अनहोनी से बचा लिया। गुरूजी तो अनंत आकाश हैं सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड हैं। मैं इसमें अपने आपको एक बिन्दु भी निरूपित नहीं कर सकता किन्तु दीक्षा लेने के ग्यारह महीने बाद ही मेरे लिए यह अनुभव एक महत्वपूर्ण अनुभव है। आगे अब जब भी इस घटना का स्मरण होता है मैं अत्यधिक रोमांचित हो जाता हूं आगे श्री गुरूजी ऐसी ही कृपा बनाये रखें।

- खेलन कुमार देवांगन
S/o श्री ईश्वर लाल देवांगन
द्वारा-देवांगन क्लाथ स्टोर्स
गंज रोड, नवापारा (राजिम)
जि. रायपुर (म. प्र.) 493881

**

* गुरू कृपा *

वर्ष १९८९-९० की बात है, परमपूज्य श्री गुरूजी वासुदेव तिवारी रीवां पधारे थे और डा. वी. ए. शिन्दे तत्कालीन डीन, मेडिकल कालेज, रीवां की कोठी पर ठहरे हुए थे। उपरोक्त काल में मेरे दामाद श्री अमर सिंह, आई. ए. एस. बाणसागर परियोजना के आयुक्त के पद पर आसीन थे। मैं सपत्नीक अपने दामाद के निवास पर ठहरा हुआ था और उन दिनों मेरा स्वास्थ्य भी ठीक नहीं था और मेरी बेटी (श्रीमती आदर्श अमर भी spondalysis से पीड़ित थी। हम दोनों इलाज के सिलसिले में डा. मर्दान अली रीवा के मशहूर होम्योपेथ हमारे मकान पर हमें देखने के लिए आते थे। कई बार ऐसा हुआ कि डा. साहब को हमारे यहां रुके हुए ४-३० बजे सायंकाल का समय हो गया तो हर बार डाक्टर साहब यह कहकर कि उन्हें अब गुरूजी के पास जाना है, चलने के लिए तैयार हो जाते। एक दिन मैंने डाक्टर साहब से पूछ ही लिया कि वह कौन गुरूजी हैं और कहां रहते हैं जहां वे जाया करते हैं? डा साहब नें पूज्य गुरूजी के विषय में बतलाया तो मुझे और परिवार वालों को जिज्ञासा हुई कि गुरूजी के दर्शन करने चाहिए। हमारे परिवार के सदस्यों को महात्माओं, योगियों और संतों में हमेशा से श्रद्धा रही है और हम लोग कई

आध्यात्मिक विभूतियों से जुड़े रहे हैं और उनका आशीर्वाद प्राप्त होता रहा है। मैंने डा. मर्दान अली से पूज्य गुरूजी के दर्शन कराने के लिए कहा तो उन्होंने अगले ही दिन डा. शिन्दे की कोठी पर शाम के ४-३० बजे पहुंचने के लिए कहा। पूज्य गुरूजी से हमारे विषय में डा. मर्दान अली ने बतला दिया था। हम लोग गुरूजी के कमरे में ले जाए गए। पूज्य गुरूजी के चरणों में हमने मत्था टेककर प्रणाम किया और फर्श पर बैठ गए। गुरूजी अपने तख्त पर शोभायमान थे। हमने अपना-अपना परिचय दिया। हम लोग गुरूजी से बहुत प्रभावित हुए। उनके श्रीमुख से अध्यात्म पर चर्चा सुनकर अतिशय शांति मिलती और आनन्द का अनुभव होता। इसके बाद तो हम लोग ३-४ दिन में दर्शन के लिए जाने लगे। हर बार गुरूजी का आशीर्वाद प्राप्त होता और हम लोग उनके चरणों में बैठे रहते और उनसे कुछ न कुछ किसी विषय में सुनते रहते। हम लोग तभी उठते जब गुरूजी कहते–"अच्छी बात है।" यह गुरूजी की ओर से इशारा होता कि अब सब लोग जाएं। सायंकाल का समय होता और गुरूजी एकान्त चाहते थे। गुरूजी की हम सब पर बहुत दया हो गई और मुझे तो उन्होंने आशीर्वाद देकर कहा "जब भी तुमको कोई संकट घेरे मुझे याद कर लेना और सहायता मांग लेना, तुरन्त ही मिलेगी।" यह अभयदान पाकर अपने भाग्य को सराहा था। गुरूजी को पुकारने की आवश्यकता जनवरी, १९९३ में उस समय पड़ी जबकि मैं एक हवन में सम्मिलित हुआ। स्थान एक महात्मा की समाधिस्थल जंगल में जिला एटा (उ. प्र.) था। अनेक लोगों के साथ मैं भी हवन की बेदी के पास बैठा था। हवन करीब आधे घण्टे से चल रहा था कि शहद की बड़ी मक्खियां (डांगर) करीब के एक पेड़ पर अपने छत्ते से निकल कर हवन पर बैठे लोगो की तरफ आ गई। मैं घबरा कर खड़ा हो गया और अपने ऊपर आई मक्खियों को हाथ से भगाने लगा। बस, फिर तो बहुत सी मक्खियां मेरे ऊपर एक साथ चिपट गई और मेरे कान, नाक और आंखों में घुस गई और चेहरे व सब खुले अगों को काटने लगीं। अपने को बचाने के लिए मैं उसी हालत में करीब ८० गज भाग गया। मक्खियां मेरे ऊपर मँडराती और काटती हुई साथ साथ रहीं। बराबर काटती रहीं। मैं बदहवास हो गया और मुझे लगा कि मेरे प्राण निकल जाएंगे। उसी समय गुरूजी का वरदान याद आया तो मैंने खूब जोर जोर से उन्हें आवाजें देकर अपने प्राणों की रक्षा के लिए पुकारा। एक दो मिनिट गुजरे होंगे कि मैंने महसूस किया कि किसी आदमी ने मेरे ऊपर कम्बल डाल दिया जिससे मक्खियों का दल तो बाहर रह गया परन्तु जो मक्खियां कम्बल के अंदर थीं मुझे काट रही थी, उन्हें मैंने हाथ से मारना शुरू कर दिया। कुछ होश हवास ठीक हुए तो करीब में खड़े मेरे भतीजे जो कार में बैठे थे, मुझे कार में बैठाकर दूर सड़क पर ले गए। वहां वह और ड्राइवर मेरे साथ मक्खियों को मारने पर लग गए। कार के दरवाजे बन्द कर लिए तो कई मक्खियां कान व नाक में से निकली। फिर डाक्टर की दुकान, जो कस्बा में थी, गए। दवा खाने व लगाने की ली। मक्खियों के डंक कई सप्ताह मेरे चेहरे पर गड़े रहे। डाक्टर ने बताया कि कई आदमी मक्खियों

के डंक से मर गये हैं। मुझे कहा - आप भाग्य-शाली हैं जो बच गए। यह गुरूजी का ही करिश्मा है जो मेरी जान बच गई। उनको शत् शत् प्रणाम।

दिनांक ४ मई, १९९५

महात्माप्रसाद रायजादा
१८५, सिविल लाइन्स,
बरेली (उ. प्र.)

✻ ✻ ✻

✻ सद्गुरू महिमा ✻

14.6.95

मैं सुरेशकुमार सोनी सन् 1982 से श्री गुरूदेव का दीक्षित शिष्य हूं. पहले तो मैं काफी भटक गया था किन्तु दस वर्ष पश्चात पुन: गुरूजी के आशीर्वाद से तथा बारम्बार सान्निध्य के अनुभव से स्वयं को हमेशा रोमांचित अनुभव करता हूं।

अगस्त 1992 में श्री बालकृष्ण का यमुना पार करते हुए दर्शन एवं श्री हरि के दिव्य प्रकाश की एक झलक से रोमंचित होना तथा सन 1994 में मध्यरात्रि के पश्चात श्री गणपति महराज का स्वप्न में आभा एवं अपने हाथ से शक्ति देना तत्पश्चात् दूसरे दिर रात्रि के अतिम प्रहर में एक नोट बुक को खोलना नोट बुक के अन्दर अक्षर ब्रह्म श्री ओम् का दर्शन प्राप्त करना यह सब उनकी कृपा है.

दिसम्बर, 1994 में एक दिन स्वप्न में मैं बिलासपुर गया था, वापस लौटते समय मेरी गाड़ी खराब हो गई है तो मैं गाड़ी छोड़कर पैदल घर आ रहा था तो एक ऐसे स्थान में पहुंच गया जहां चारों ओर शिवलिंग ही शिवलिंग दिख रहे थे। ध्यान से देखने के बाद एक महिला का ध्यान आया किन्तु उसका चेहरा न देख सका परन्तु उनके गोद में एक बालक को देखा और ध्यान से देखने पर उस बालक में श्री गुरूजी का चेहरा नजर आया। मैं उस दृश्य की कल्पना कर बारम्बार रोमांचित होता हूं। यह हमारे गुरुजी की कृपा से सम्भव हुआ। उनसे चर्चा करने पर यह बात स्पष्ट हुई कि वह महिला और कोई नहीं, बल्कि माँ पार्वती ही थी।

मैं श्री गुरूजी के चरणों में बारम्बार प्रणाम करता हूं जिनके आशीर्वाद से यह सब सम्भव हुआ। यह गुरू कृपा ही है।

सुरेशकुमार सोनी
महामाई वार्ड, मुंगेली
जिला - बिलासपुर

★ स्वप्न ही स्वप्न ★

सन् 1988 में मेरे छोटे भाई श्री जितेन्द्र उपाध्याय की मृत्यु युवावस्था के चरमोत्कर्ष (21 वर्ष) में हुई। 1993 में पिताजी (श्री के. एन. उपाध्याय) स्वर्गवासी हुए। इसके बाद मार्च 94 में मेरी छोटी बहिन (श्रीमती नीलम दुबे) अल्पायु (24 वर्ष) में ही विधवा हो गई। इस प्रकार 6 वर्ष के अन्तराल में परिवार के तीन तीन व्यक्तियों की मृत्यु से मन में अज्ञात भय समा गया था एवं मन अशांत रहता था। इसी बीच दास आंटी (धर्मपत्नी डा. आर. डी. दास) गरियाबन्द आई। उसका निवास पड़ोस में ही है. मैंने अपने दुख के बारे में उनसे कहा। उन्होंने गुरुजी की शरण में जाने की सलाह दी। मैंने उनके यहां पूजा स्थल पर गुरुजी की फोटो देखी। मैंने उसी दिन से गुरुजी का स्मरण करना प्रारम्भ कर दिया।

कुछ दिनों में गुरुजी का एक स्वप्न देखा। गुरुजी आशीर्वाद की मुद्रा में बैठे हैं और दास आँटी अपनी बेटी स्मिता से कह रही है कि "अब मीनू के कष्ट दूर हो जायेंगे"। गुरुजी से साक्षात् दर्शन करने का सौभाग्य अगस्त 1994 में प्राप्त हुआ। गुरुजी से मैंने दीक्षा देने का निवेदन किया तो गुरुजी ने दीक्षा देने से पहले तो मना कर दिया परन्तु वचन दिया कि कोई भी कष्ट आने पर मेरा स्मरण करना-कष्ट दूर होगा और फोटो में अगरबत्ती लगाने की आज्ञा दी। मैं रोज फोटो में अगरबत्ती लगाती रही, गुरुनाम का स्मरण करती रही और गुरु पुजा में उपस्थित रहती।

दीक्षा लेने के पूर्व मैंने गुरुजी के स्वप्न में तीन चार बार दर्शन किये। एक बार स्वप्न में गुरु-पर्व का दृश्य देखा। एक स्वप्न में मैं अपने बच्चों को उनके पास ले गई हूं। गुरुजी ने स्वप्न में कहा- तुम दूसरे के कचरे को बहुत देखती हो एक स्वप्न में गुरुजी को खिचड़ी खिला रही हूं। श्रद्धेय गुरुजी ने पीठ पर हाथ फेरा।

गुरुजी की असीम कृपा से फरवरी 95 में गुरुजी ने दीक्षा प्रदान की। दीक्षा के बाद एक दिन स्वप्न में गुरुजी के दर्शन हुए। उन्होंने सीधे आसन में बैठने के लिये कहा और तुरंत उसी रुप में शिशु का रुप धारण कर मेरी गोद में आ गये और मेरी बांई भुजा पर हाथ फेरा।

जब से गुरुजी का नाम स्मरण करना प्रारम्भ किया है तभी से मानसिक शांति का अनुभव करती हूं। छोटी सी छोटी समस्या का सहज समाधान हो जाता है। गुरुजी की प्रेरणा से जीवन जीने की आशा बलवती हुई है। गुरुजी की छत्र-छाया बनी रहे।

पूज्यनीय गुरुजी के चरणों में मेरा शत् शत् नमन।

श्रीमती मीनू पाण्डेय
उच्चश्रेणी शिक्षक
शास. कन्या उ. मा. विद्यालय
गरियाबन्द

बांह छुड़ाए जात हो...

पेन्ड्रा

दीक्षा लेने के 6 माह बाद की अनुभूति –

एक दिन अभ्यास में मैंने रात्रि में देखा कि एक गहरी सुरंग में मैं आगे बढ़ते जा रहा हूं। सामने एक विशाल शमोसरण की रचना है, भगवान महावीर के दिव्य दर्शन का लाभ हुआ। मैंने देखा कि चौबीस तीर्थंकर एक पंक्ति में विराजमान है उनके बीचों बीच परम पूज्यनीय गुरुजी विराजमान हैं। गुरुजी दिव्य ज्योति से घिरे हुये हैं। मैं उनके श्रीचरण को पकड़ लेता हूं। गुरुजी ऊपर की ओर बढ़ते चले जा रहे हैं मैं गुरुजी के श्रीचरण को पकड़ा हुआ हूं एवं कह रहा हूं –

"बांह छुडाए जात हो निबल जानके मोय,
हृदय से जब जाइयो मर्द जानियो तोय।

एवं निरंतर अश्रु प्रवाह हो रहा है, आनन्द आ रहा है। यह पूरी रात्रि चलता रहा। सद्गुरु कृपा ही जीवनधार है।

वीरचन्द जैन

✻ ✻ ✻

'वलय'

(1)

प्राय: आप लोग देवी देवताओं के कैलेण्डर या चित्र देखते रहते हैं। आप लोगों ने देखा होगा कि उनके सिर के पीछे एक गोलाकार वलय दिखाया गया होता है। यह वलय केवल देवी देवताओं के सिर के पीछे ही नहीं होते बल्कि आप और हम भी उससे घिरे हुए रहते हैं।

यह रिंग के समान दुधिया रंग का एक – डेढ़ सूत चौड़ा रहता है जिसके चारों ओर किरणें फूटती रहती हैं। इस वलय के ठीक 6 से 8 इंच पीछे की ओर उसी आकार में दुधिया रंग लिये धुआं दिखाई देता रहता है। दूसरी विशेष बात यह है कि मस्तक के दाईं ओर पृष्ठ भाग में उभरे हुए हिस्से से विचारों के अनुसार रंगमिश्रित धुआं निकलता रहता है जिसमें रंगों के परिवर्तन से सामने वाले व्यक्ति के व्यक्तितव को जाना जा सकता है।

अशोक वासुदेव तिवारी

(2)

✻ षट्चक्र ✻

△ मूलाधार पर एक त्रिकोणाकृति दिखाई दी जिसकी तीनों भुजायें चमक रही थीं, बीच में एक ज्योति थी जिसका दुधिया प्रकाश त्रिकोणकृति के भीतर बाहर फैला हुआ था। उस त्रिकोण का आधार नीचे और शीर्ष ऊपर की ओर था।

▽ थोड़ी देर बाद आज्ञा–चक्र में भी एक त्रिभुज का दर्शन हुआ परन्तु पहले त्रिभुज का ठीक उल्टा। इसका आधार ऊपर और शीर्ष नीचे की ओर था और उसकी भी भुजायें चमक रही थी

★ अब मूलाधार की त्रिकोणाकृति धीरे धीरे ऊपर उठते उठते आज्ञाचक्र में आती है और दोनों आपस में मिल जाते हैं। दोनों आकृतियों के शीर्ष की स्थिति परस्पर विलोम होने के कारण एक छह कोणों वाले एक तारक की आकृति बनती है। षटकोण आकृति बनते ही तीव्र गति से घूमने लगती है और उसमें से सुनहरी किरणें निरंतर निकलने लगती हैं। परिणाम स्वरूप अब वह एक रुपये के सिक्के के बराबर गोल आकार का अत्यन्त आकर्षक दिखाई देने लगता है। यह प्रकाश आज्ञा–चक्र की जगह भीतर और बाहर भी दिखाई दे रहा था। यह स्थिति निरंतर 20 दिन तक बनी रही।

यह सब गुरुकृपा से ही सम्भव है।

अशोक वासुदेव तिवारी
श्री वासुदेव योगाश्रम
बड़ा बाजार, मुंगेली
जिला–बिलासपुर

✻✻

रायपुर गुरु परिवार
व्यय
गुरु–पर्व 94
आय
रायपुर गुरु परिवार

गुरु–पर्व 94

रायपुर गुरु परिवार — आय

आय		राशि
१ गुरु परिवार से प्राप्त सहयोग	–	70,277-00
२ दालें क्रय हेतु प्राप्त सहयोग	–	1,001-00
३ अधिक प्राप्त	–	002-00
४ पुस्तक/पत्रिका का विक्रय मूल्य	–	4,253 00
५ पूजा सामग्री का विक्रय मूल्य	–	5,483-00
कुल प्राप्तियां	–	81,016-00
प्रारम्भिक सिलक	–	698-25
वर्धमान योग	–	81,714-25

व्यय — रायपुर गुरु परिवार

व्यय			राशि
१ धर्मशालाओं का किराया			
सत्यनारायण धर्मशाला -		3000	
भीमसेन भवन -		4433	
गुजराती धर्मशाला -		1000	
रेल्वे इन्स्टीट्यूट हाल -		290	8,723-00
२ बर्तन/बिस्तर किराया			
महाराजा किराया भण्डार -		4772-25	
सुन्दर किराया भण्डार -		530-00	
सत्यनारायण धर्मशाला -		342-00	
गुजराती धर्मशाला -		301 00	
शिव किराया भण्डार -		40 00	
माहेश्वरी सभा -		1,061-00	7,046-00
३ भोजन सामग्री –		18,517 00	
वापसी –		(–) 2,950 00	15,567-00
४ गेहूं पिसाई/चाय/रिक्शा/डीजल/ड्रायव्हर पारिश्रमिक आदि	–		622-00
५ रसीद बुक छपाई/पोस्टेज स्टेम्प्स/पोस्ट कार्ड/फोटो कापी	–		1,380-00
६ पूजा सामग्री	–		4,300 00
७ आमंत्रण पत्रिका छपाई	–		1,825-00
८ उद्‌बोधन पत्रिका फोटो सहित	–		10,896 00
९ सब्जी/खोवा/दही वगैरह	–		4,260 00
१० कार किराया — मुंगेली से रायपुर	–		630-00
११ रसोइया	–		3,000-00
१२ स्टेज डेको/बेनर/लाईट डेको./कैसेट वगैरह	–		7,122-00
कुल व्यय	–		65,371-25
अन्तिम सिलक	–		16,343 00
वर्धमान योग	–		81,714-25

इसके अतिरिक्त दो परिवारों से गेहूं/चाँवल सहयोग के रुप में प्राप्त हुआ।

मनोहर
हस्ते रायपुर गुरु परिवार

* अंतिम सिलक का ब्योरा
१ प. पू. गुरुजी को भेंट 11,011-00
२ पुस्तक/पत्रिका खाता में 4,253-00
३ आरती खाता में जमा 1,079-00

उद्‌बोधन पत्रिका प्रकाशन

आय–व्यय पत्रक 31.12.94

1. गुरू-पर्व, 94 कार्यक्रम से	10,896-00	1. उद्‌बोधन 94 का प्रकाशन, फोटो सहित	10,896-00
2. पुस्तक/पत्रिका का विक्रय मूल्य	4,253-00		
कुल प्राप्तियां	15,149-00	कुल व्यय	10,896-00
प्रारम्भिक सिलक	3,248-00	अन्तिम सिलक	7,501-00
वर्धमान योग	18,397-00	वर्धमान योग	18,397-00

श्री वासुदेव योगाश्रम
बड़ा बाजार, मुंगेली
जिला–बिलासपुर (म. प्र.)

रायपुर गुरू परिवार द्वारा प्रकाशित